॥ ॐ श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः ॥

विधिप्रपा-आचारदिनकर-प्रवचनसारोद्धार-आवश्यकबृहद्वृत्ति तथा साधुविधिप्रकाश आदिसे संग्रहीत

संविज्ञ साधु-साध्वी योग्य 'आवश्यकीय-विचार-संग्रह' सहित.

आवश्यकीय-विधि-संग्रह

संयोजक—

श्रीखरतरगच्छगगनांगणनभोमणि श्रीमन्मोहनमुनीश्वरातेवासि श्रीमद्राजमुनिजी महाराजके शिष्यरत्न श्रीलब्धिमुनिजी महाराज तथा अनुयोगाचार्य पंन्यासप्रवर-श्रीमत्केशरमुनिजी गणिवरके सुशिष्य मुनिश्रीबुद्धिसागरजी महाराजः

मुद्रक और प्रकाशक—

श्री हिन्दी जैनागम प्रकाशक सुमति कार्यालय जैन प्रेस, कोटा (राजपूताना).

वीरसंवत् २४६२ | अमूल्य भेट | विक्रम संवत् १९९२

प्रस्तावना—

इस संग्रहका संयोजन विक्रम संवत् १९८२ में हुआ था, परम पूज्य महोपाध्यायजी श्रीमत्क्षमाकल्याणजी गणि कृत 'साधुविधिप्रकाश' की तमाम विधियां इस संग्रहमें संगृहीतहैं, केवल 'साधुविधिप्रकाश' में वांदणे देनेका विचार, पाण्मासिक तपश्चिंतनविचार आदि विशेष बातें विधिके साथही बतादी गईहैं, हमने उन विशेष बातोंको टिप्पनीमें या 'विचारसंग्रह' रूप जुदे विभागमें रखदी हैं, जिससे आधुनिक जमानेके लोगोंको विधि जाननेमें सुभिता रहे।

'साधुविधिप्रकाश' में केवल रातादिन काम में आनेवाली विधियां ही हैं, अतः लोचविधि, सज्झाय निक्षेप तथा उत्क्षेप विधि आदि बारहों मास काममें आनेवाली कितनीक आवश्यकीय विधियां परम शासन प्रभावक खरतरगच्छ गगनांगण नभोमणि आचार्यवर्य श्रीजिनप्रभसूरिजी महाराज कृत 'विधिप्रपा' तथा श्रीमद्वर्द्धमानसूरिजी महाराज कृत 'आचारदिनकर' के आधार पर एवं दृश्यमान प्रणालिका अनुसार संगृहीत की गई हैं,

सबके अंतमें बारह व्रत तथा सर्व तपस्या उचरानेकी और पारणेकी विधि जो रखी गई है वह साक्षररत्न परम पूज्य मुनिवर्य श्रीमल्लब्धिमुनिजी महाराज ने संगृहीत करी है।

इस संग्रहमें से 'साधु साध्वियोंकी अंतिम आराधना विधि तथा अंतक्रिया विधि' करीब ३ वर्ष पहले प्रकाशित होचुकी थी और महोपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजी महाराज के उपदेश से 'हिंदी जैनागम प्रकाशक सुमति कार्यालय' की तरफ से शेष बचे हुवे संपूर्ण सग्रहको अब प्रकाशित किया है यह उनका प्रयास बहुत ही प्रशसनीय है अतः मैं उनको पुनः पुनः धन्यवाद देताहू ।

अतमें मेरी मतिमन्दता या बुद्धि विपर्यासके कारण कुछ भी विधि विपरीत लिखा गया हो अथवा प्रेसकी गफलतसे कोइ भूल रही हो उसके लिए विधिशास्त्रज्ञोंसे सुधारके पढनेकी प्रार्थना पूर्वक मैं मिथ्यादुष्कृत देता हुआ विरमता हूं ।

इस ग्रन्थ की विषयानुक्रमणिका ग्रन्थ के अन्त में दी गई है वहां से पढलेना ।

वि० सं० १९९३, श्रावण शु० ३. पायधुनि,
श्रीमहावीर स्वामी का मदिर-उपाश्रय, मुबई.

लि० अनुयोगाचार्य पंन्यास प्रवर श्रीमत्केशरमुनिजी गणि शरण किंकर
मुनि—बुद्धिसागर.

कल्पसूत्र अल्प मूल्य २) दशवैकालिक मूल भावार्थ १) विपाकसूत्र मूल अर्थ और टीकार्थ सहित २) पर्वकथा संग्रह साधु-श्रावक आराधना सहित १) अतगडदशा तथा अनुत्तरोववाइ भेट और ज्ञाताजी, उववाई, उपासकदशा आदि छपरहे हैं

मिलने का ठिकाना—जैन प्रेस, कोटा (राजपूतान)

श्री हिन्दी जैनागम प्रकाशक सुमति कार्यालय जैन प्रेस कोटा का

उद्देश

१—पन्द्रह हजार रुपये सहायता फण्ड में इकट्ठे करके सरल और सुन्दर हिन्दी भाषा में सूत्रों को तथा विशेष उपयोगी ग्रन्थों को प्रकाशित करवाकर हिन्दी भाषी साधु साध्वी ज्ञानभण्डार पुस्तकालय तथा श्री संघ को अल्प मूल्य में या बिल्कुल अमूल्य भेट स्वरूप देने के लिये भगवान् की वाणी का प्रचार करना।

२—दो चार लाख की या मासिक अच्छी आमदनी की बड़ी योजना करके उसके द्वारा हिंदी अंग्रेजी आदि भाषाओं में जैन सिद्धांतों के तत्त्व ज्ञान की तथा तमाम जैन उपदेशकों के सार गर्भित मर्मग्राही भाषणों की छोटी छोटी हज़ारों की संख्या में पुस्तकें प्रकाशित करवाकर भारत वर्ष के तमाम धर्मों की पब्लिक संस्थाओं में और विद्वान् समाज में उनका प्रचार करना जिससे जैनधर्म का प्रचार हो और लाखों जीवों को अभयदान मिले।

३—प्रेस की बचत ज्ञान प्रचार, स्वधर्मियों को सहायता और जीवदया आदि परोपकार में खर्च होगा। इसलिये सर्व संघ से प्रार्थना है कि—अपनी २ छपाई का काम यहां पर भेजने की कृपा करें।

श्री हिन्दी जैनागम प्रकाशक सुमति कार्यालय.
जैन प्रेस, कोटा (राजपूताना)

॥ ॐ अर्हंनम ॥

श्रीखरतरगच्छनभोमणि–परमगुरु–श्रीमोहनमुनीश्वर–श्रीजिनयशःसूरि–श्रीकेशरमुनिपदपंकजेभ्यो नमः

विधिप्रपा आचारदिनकर तथा-साधुविधि प्रकाशसे-संग्रहीत–संवेगपाक्षिक-सुविहित

साधु साध्विओंके करने योग्य—

आवश्यकीय-विधि-संग्रहः

१—राइय-पडिक्कमण विधिः—

स्थापनाचार्य अथवा गुरुके सामने खमासमण० देकर इरियावही (१) पडिक्कमे, एक लोगस्सका काउस्सग्ग करे, पार कर प्रगट लोगस्स कहे, खमा० (२) देकर 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! कुसुमिण दुस्सुमिण

(१) जहां जहां इरियावही पडिक्कमने का होवे वहां वहां सर्वत्र १ लोगस्सका काउस्सग्ग तथा णमो अरिहंताणं कह कर पार कर प्रगट लोगस्स कहने तक समझना। (२) जहां जहां 'खमा' के आगे बिंदी होवे ? वहां वहां पूरा खमासमणा समझना।

ओहडावणियं–राइय पायच्छित्त विसोहणऽत्थं काउस्सग्ग करूं ?, इच्छं कुसुमिण दुस्सुमिण ओहडावणियं राइय पायच्छित्त विसोहणऽत्थं करेमि काउस्सग्गं' अन्नत्थ उस्ससिएणं० कह कर "सागरवर गंभीरा" तक चार लोगस्सका काउस्सग्ग करे, पार कर प्रगट लोगस्स कहे, खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भगवन्! चैत्यवंदन करूं? इच्छं' कह कर "जयउ सामिय जयउ सामिय" इत्यादि चैत्यवंदन कहे, और जं किंचि० नमुत्थुणं० जावंति चेइयाइं० जावंत केवि साहू० नमोऽर्हत्० उवसग्गहरं० तथा जय वीयराय० कहे. बाद खमा० 'इच्छा० संदि० भग०! सज्झाय संदिसाउं?' इच्छं इच्छामि खमासमणो० 'इच्छा० संदि० भग०! सज्झाय करूं?, इच्छं' कह कर एक नवकार० धम्मो मंगलकी पांच गाथा और ऊपर एक नवकार कहे, बाद "अणुजाणह (१) इच्छकार सुहराइ०" कहकर(२) चार खमा० देवे, पहला खमा० देकर कहे–आचार्य मिश्रं, दूसरा खमा० देकर कहे–उपाध्याय-

(१) श्रीजिनपतिसूरिजीने अपनी समाचारीमें लिखा है कि–पडिक्कमणेमें तो केवल गुरुही "इच्छकार सुहराइ" कहे, अन्य साधु गुरुको वंदना करते हुए कहे। (२) इतने तक कर लेने बाद यदि पडिक्कमणेकी वेला न हुई होवे तो अरिहंतादिका स्मरण करता हुआ धर्म ध्यानमें वर्ते, पढे हुए पाठको मनमें संभाले, जब वेला होजावे तब आगे लिखे मुजब चार खमा० देकर पडिक्कमणा ठावे। दो

मिश्रं, तीसरा खमा॰ देकर कहे—वर्तमान गुरून्, चौथा खमा॰ देकर कहे—सर्व साधून्। बाद हाथ जोड कर मुख आगे मुहपत्ति रख कर शिर नमा कर "सव्वस्स वि राइय॰" (१) कहे, बाद डावा गोडा ऊँचा करके नमुत्थुणं॰ कहे, बाद चारित्राचारकी शुद्धिके लिये करेमि भंते॰। इच्छामि ठामि काउस्सग्गं॰ तस्स उत्तरि॰ अन्नत्थ उस्ससिएणं॰ कह कर एक लोगस्सका काउसग्ग करे, पार कर दर्शनाचारकी शुद्धिके वास्ते प्रगट लोगस्स॰ सव्वलोए अरिहंत चेइयाणं॰ तथा अन्नत्थ उस्ससिएण॰ कह कर फिर एक लोगस्सका काउस्सग्ग करे, पार कर ज्ञानाचारकी शुद्धिके वास्ते पुक्खवरदीवऽड्ढे॰ सुअस्स भगवओ करेमि काउस्सग्गं॰ वंदणवत्तिआए॰ अन्नत्थ॰ कह कर काउ॰ करे, उसमें "सयणासणऽन्नपाणे, चेइ जइ सिज्ज काय उच्चारे. समिइ भावणा गुत्ति, वितहायऽऽरणे य अइयारो ॥१॥" इस गाथाको अर्थ सहित १ वार अथवा मूल ३ वार विचारे या ८ नवकार गिणे पार कर सिद्धाणं बुद्धाणं॰ कह कर संडासे (२) पूजते हुए बैठ कर तीसरे आवश्यककी मुहपत्ति पडिलेहे और दो वार वांदणे देवे (३)।

घडी रात बाकी रहे तब राइय पडिक्कमणेकी वेला होती है। (१) 'इच्छा॰ संदि॰ भग॰ राइयपडिक्कमणे ठाउं? इच्छं' ऐसा कह कर डावे हाथसे मुखके आगे मुहपत्ति रखे और जीमणा हाथ ओघे ऊपर स्थापन कर 'सव्वस्स वि" कहनेकी आजकल प्रवृत्ति है। (२) संडासे पूजनेका वृत्तांत जाननेके लिये इसी पुस्तकके पीछे नंबर १०'संडाशक प्रमार्जन विचार' देखो। (३) वांदणे देनेकी रीति जाननेके लिये

बाद खडे होकर कहे—'इच्छा० संदि० भग०! राइयं आलोउं?' गुरु कहे—'आलोएह' बाद 'इच्छं' आलोएमि जो मे राइओ० तथा संथारा उट्टणकी० कह कर "सव्वस्स वि राइय दुच्चिंतिय दुब्भासिय दुच्चिट्ठिय इच्छाकारेण संदिसह भग०!" इतने तक कहकर थोडासा ठहर जाय, जब कि 'पडिक्कमेह' ऐसा गुरु कह देवे, बाद शिष्य—"इच्छं तस्स मिच्छामि दुक्कडं" कह कर बैठ कर जीमणा गोडा ऊँचा करके जोडे हुए दोनों हाथोंसे ओघा तथा मुहपत्ति मुखके आगे रख कर कहे 'भगवन्! सूत्र कढुं?' गुरु कहे—'कड्ढेह'। बाद १-१ अथवा ३-३ नवकार तथा करेमि भंते०! कह कर "चत्तारि मंगलं" इत्यादि तीनों आलावे और "इच्छामि पडिक्कमिउं जो मे राइओ०" तथा "इच्छामि पडिक्कमिउं इरियावहियाए०" कह कर पगामासिज्जाए० कहे, "तस्स धम्मस्स केवली पन्नत्तस्स" कहते हुए खडे होजाय "वंदामि जिणें चउव्वीसं" तक संपूर्ण कह कर दो वांदणे देवे और गुरुको अब्भुट्ठियो (१) खमावे, बाद दो वांदणे देकर श्रावक

नम्बर २ 'वांदणे देनेका विचार' देखो। (१) खडा हुआ आधा नमकर "इच्छा० संदि० भग०! अब्भुट्ठिओमि अब्भिंतर राइयं खामेउं?" इतना कहे बाद गुरु कहे 'खामेह' बादमें "इच्छं खामेमि राइयं" ऐसे कहते हुए संडासे पूंजके गोडों ऊपर बैठकर जीमणी तरफ खोले में ओघा रखे और डावे हाथ से मुखके आगे मुहपत्ति लगा कर जीमणा हाथ गुरुके चरणोंके लगावे, बाद "जं किंचि अप्पत्तियं" यहां से लगा कर "मिच्छामि दुक्कडं" तक संपूर्ण पाठ कहे।

साथमें हो ? तो "आयरिय उवज्झाय०" कह कर करेमि भंते०। इच्छामि ठामि० तस्स उत्तरि० अन्नत्थ उस्ससिएणं० कह कर तप चिंतवणी काउस्सग्ग करे, काउस्सग्गमें छम्मासी (१) तपका चिंतवन करे जो भगवान् श्रीमहावीर स्वामी ने छद्मस्थ (२) अवस्था में कियाथा, यदि तप चिंतवन नहीं आता हो ? तो ६ लोगस्स गिणे, पार कर प्रगट लोगस्स कह कर छठे आवश्यककी मुहपात्ति पडिलेहे और दो वांदणे देकर डावा गोडा ऊँचा करके "सद्भक्त्या देवलोके" इत्यादि अथवा "सकल तीर्थ वंदु कर जोड" इत्यादि तीर्थ नमस्कार कहे, वाद 'इच्छकारी भग०। पसायकरी पच्चक्खाण करावो जी' ऐसा कह कर मनमें धारा हुआ पच्चक्खाण गुरु मुखसे करे, वाद, (३) 'इच्छामो अणुसट्ठिं नमो खमासमणाणं नमोऽर्हत्०' (४) कह कर "परसमय तिमिर तरणिं" (५) की तीन गाथा कहे और नमुत्थुणं० कह कर आगे लिखे मुजब चार थुइसे देववंदन करे–

---

(१) छम्मासी तप चिंतवन के लिये नंबर ३ 'छम्मासी तप चिंतवन विचार' देखो। (२) दीक्षा लिये वाद जब तक केवल ज्ञान नहीं होवे तब तक छद्मस्थ अवस्था कहाती है। (३) पहले गुरु बोल जाय वाद सब जणे बोले। (४) साध्विओं को नमोऽर्हत् किसी जगह नहीं कहना चाहिये। (५) इसकी एक गाथा पहले गुरु बोल देवे वाद सब जणे तीनों गाथा कहें।

खडे होकर अरिहंत चेइयाणं० अन्नत्थ उस्ससिएणं० कह कर १ नवकारका काउस्सग्ग करे, पार कर नमोऽर्हत्० कह कर पहली थुइ कहे, बाद लोगस्स० सव्वलोए अरिहंत चेइयाणं० अन्नत्थ० कह कर १ नवकारका काउसग्ग करे,पार कर दूसरी थुइ कहे, बाद पुक्खर वर दीवऽड्ढे०सुअस्स भगवओ करेमि काउस्सग्गं० वंदण वत्तिआए०अन्नत्थ० कह कर १ नवकारका काउस्सग्ग करे, पार कर तीसरी थुइ कहे, बाद सिद्धाणं बुद्धाणं० वेयावच्चगराणं० अन्नत्थ० कहकर १ नवकारका काउस्सग्ग करे, पार कर नमोऽर्हत्०कह कर चौथी थुइ कहे, बाद बैठ कर नमुत्थुणं० कह कर पांच खमासमणे देवे—पहला खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! बहुवेल संदिसाउं ?*, इच्छं' दूसरा खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! बहुवेल करूं ?, इच्छं' तीसरा खमा० देकर 'आचार्य मिश्रं' चौथा खमा० देकर 'उपाध्याय मिश्रं' पांचवां खमा० देकर 'सर्व साधून्' इस तरहसे कहे।

॥ इति राइय पडिक्कमण विधिः ॥

* करने लायक स्वाध्याय (सज्झाय) ध्यान आदि कृत्य भी साधुओंको आचार्य (गुरु) की आज्ञासे करने कल्पते हैं; विना आज्ञा नहीं, इस वास्ते छोटे कृत्योंकी एक साथ ही आज्ञा लेनेके लिये साधु लोग बहुवले करते हैं (पंचवस्तुक गाथा ५५८ पृ० ९१)

वाद उत्तर दिशा या ईशान कोणके सामने मुख करके खमा० देकर कहे—'इच्छा०संदि०भग० ! चैत्यवंदन
करू ?, इच्छं' कह कर श्रीसीमधर स्वामीका चैत्यवंदन कहे नमुत्थुणं० कहते हुए "ठाणं संपत्ताणं" की जगह
"ठाणं सपाविय कामस्स नमो जिणाण० नमोऽर्हत्" कह कर श्रीसीमधर स्वामी का स्तवन कहे, वाद जय
वीयराय० अरिहंत चेइयाणं० अन्नत्थ० कह कर एक नवकारका-काउस्सग्ग करे, पार कर नमोऽर्हत्० कह कर
सीमधर स्वामीकी १ थुइ कहे। इतना करलेनेके वाद भी यदि पडिलेहणका वख्त न हुआ हो ? तो सिद्धा-
चलजीका चैत्यवंदन कह कर "जं किंचि नाम तित्थं० नमुत्थुणं० जावंति चेइयाइं० जावंत केवि साहू० नमो
ऽर्हत्०" कह कर सिद्धाचलजीका स्तवन कहे, वाद जय वीयराय० अरिहंत चेइयाणं० अन्नत्थ० कह कर एक
नवकारका काउस्सग्ग करे, पार कर नमोऽर्हत्० कह कर सिद्धाचलजीकी एक थुइ कहे। इन दोनों चैत्यवंदनोंके
करने का नियम नहीं है, यदि समय हो ? तो कर लेवे और समय न हो ? तो नहीं भी करें।



२—प्रातः (१) पडिलेहण विधिः—

स्थापनाचार्यजी खोल कर इरियावही पडिक्कमे, खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! पडिलेहण संदिसाउं? इच्छं' इच्छामि खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! पडिलेहण करूं? इच्छं' कहकर मुहपत्ति पडिलेहे, बाद मुखपर मुहपत्ति अथवा कपडेका पल्ला लागा कर ओघा खोले, पहले पाठा, पीछ दशियां २५-२५ बोलसे * पडिलेह कर १० बोल बोलते हुए दशियोंसे दंडीको पडिलेहे, बाद सूतकी निषद्या (निशीथिया) तथा उनकी निषद्या (ओघारिया) २५-२५ बोलसे पडिलेहे उसके बाद डोरा चोवडा करके १० बोल बोलते हुए ओघेकी दशियोंसे पडिलेह कर कानमें रखे. और खडे गोडोंसे बैठ कर ओघा बांद लेवे। बाद खमा० देकर

[१] सूर्य उदय होनेके पहले झोली-पडले आदि गौचरीके उपकरणोंको छोड कर ओढने विछानेके कपडे तथा दंडा आदि सब उपकरणोंकी पाडिलेहण कर चुके. और काजा लेते समय सूर्य उदय होजाय. वैसे अवसरमें पडिलेहण शुरू करना चाहिये, ऐसा 'प्रवचन सारोद्धार' टीका (पत्र १६६) मे लिखा है। * हरएक उपकरण पडिलेहनेमें जहां २५ बोल लिखे होवे वहां "सूत्र अर्थ" से लगाके "काय दंड परिहरूँ" तक और जहां १० बोल लिखे होवे वहां पर "सूत्र अर्थ" से लेकर "सुधर्म आदरूं" तक, तथा जहां १३ बोल लिखे हो वहां पर "सूत्र अर्थ" से लेकर "कुधर्म परिहरूँ" तक, मुहपत्ति पडिलेहण के २५ बोलोंमें से सब जगह यथोचित समझलेना।

'इच्छा० संदि० भग० ! (१) अगपडिलेहण संदिसाउं ?' इच्छं इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि० भग० ! अंगपडिलेहण करूं ?, इच्छ' कह कर मुहपत्ति पडिलेहे, वाद कंदोरा हो ? तो खोल कर चोवडा करके १० बोलसे पडिलेह कर कानमें रखे. और चोलपट्टा पडिलेह कर पहर कर कंदोरा वांध लेवे। वाद गुरु अथवा अन्य कोईभी साधु खमा० देकर 'इच्छकारी भगवन् ! पसाय करी पडिलेहणा पडिलेहावोजी' कह कर गोडों ऊपर बेठ कर कंवली पडिलेहे और पूज कर जमीन ऊपर रखे, उस पर आगे लिखे मुजव स्थापनाचार्यजीकी पडिलेहण करे—

स्थापनाचार्यजी खोल कर उनके ऊपर ढांकनेकी मुहपत्ति पडिलेह कर जीमणे हाथमें रखे और डावे हाथमें स्थापनाचार्यजी लेकर १३ बोलसे (२) पडिलेह कर कवल पर रखे, वाद समेटी हुई नीचली दो मुहपत्तियां तथा विछाई हुई सूतकी और ऊनकी मुहपत्तियां (३) पडिलेहे, वाद नीचे ऊनी और ऊपर सूतु मुहपत्ति विछावे, उसमे समेटी हुई दो मुहपत्तिया रख कर ऊपर स्थापनाजी रखे, उनके ऊपर समेटी हुई तीसरी मुहपत्ति

(१) अग शब्दका अर्थ-शरीर पर रहे हुए चोलपट्टा कदोरा समझना, पागरणी आदि नहीं। (२) "शुद्ध स्वरूप धारक १ ज्ञान २ दर्शन ३ चारित्र ४ सहित, सद्दहणा शुद्धि ५ प्ररूपणा शुद्धि ६ दर्शन शुद्धि ७ सहित, पाच आचार पाले ८ पलावे ९ अनुमोदे १० मनो गुप्ति ११ वचन गुप्ति १२ काय गुप्ति १३ आदरे" ये १३ बोल स्थापनाचार्य पडिलेहनेके हैं। (३) २५-२५-बोल से।

ढांक कर सूतु तथा ऊनी मुहपत्तिसे बांध देवे और झोलीमें रख कर ठवणी ऊपर रख देवे, वादमें शेष रहे अन्य साधु खमा० देकर कहें 'इच्छकारी भगवन्! पसाय करी पडिलेहणा पडिलेहवोजी'।

बाद सब साधु एक खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग०! मुहपत्ति पडिलेहुं ?' इच्छं इच्छामि खमा० देके मुहपत्ति पडिलेहें, खमा० देकर 'इच्छा०संदि० भग! ओहिपडिलेहण संदिसाउं ?' इच्छं इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि० भग०! ओहिपडिलेहण करूं ?, इच्छं' कह कर खडे पगोंसे बैठ कर गुरु तथा अपने वडे साधुओंकी शेष उपधि पडिलेह कर अपनी तमाम उपधि पडिलेहे, उनमें पहले कंवल वाद अनुक्रमसे चद्दर–पांगरणी–उत्तरपट्टा–संथारिया–आसन आदि कपडे तथा पाट वगेरह २५-२५ वोलसे. दंडा तथा दंडासण १०-१० वोलसे पडिलेहे बाद एक साधु उपाश्रयमें काजा निकाल कर एक जगह इकट्ठा कर उसको जुदा जुदा करके अच्छी-तरह देख लेवे, यदि जूं वगेरह कोई जीव हो ? तो लेकर एकांत किसी वस्त्रादिकमें रख देवे, वाद काजा सूपडी-में लेकर एकांत भूमिमें "अणुजाणह जस्स गो" कह कर छूटा छूटा परठ कर "वोसिरे ३" कहे, वाद उपाश्रय के आस पास सौ सौ (१००) हाथ भूमिमें वसति संशोधन करे, यानी भूमिको नजरसे देखे, यदि कोई

हड्डी या कलेवर आदि देखनेमें आवे तो उनको दूर करा कर 'निसीहि ३ मत्थएण वंदामि, भगवन्! सुद्धा वसहि' कहता हुआ उपाश्रयमें आवे ।

वाद स्थापनाचार्य के आगे इरियावही पडिक्कमे, जो काजा परठने तथा वसति संशोधन करनेको गया हो? वह खमा० देकर कहे—'इच्छा० संदि० भग०! वसति पवेउं?' गुरु कहे 'पवेयह' इच्छं इच्छामि खमा० देकर कहे—'भगवन्! सुद्धावसहि' गुरु कहे 'तहत्ति' वाद खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग०! सज्झाय संदिसाउ!' इच्छ इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि० भग०! सज्झाय करू?' इच्छं, कह कर १ नवकार तथा धमो मंगलकी १७ गाथा और ऊपर १ नवकार कहे, खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग०! उपयोग संदिसाउं?' इच्छं इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि० भग०! उपयोग करू?' इच्छ इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि० भग० उपयोग करण निमित्त काउस्सग्ग करू?' खडे होकर 'इच्छं उपयोग करण निमित्त करेमि काउस्सग्गं अन्नथ० कह कर एक नवकारका काउस्सग्ग करे, पार कर प्रगट नवकार गिणे ।

वाद गुरुके आगे आधा नमकर हाथ जोड कर शिष्य कहे—'इच्छा० संदिसह भगवन्?' गुरु कहे—'लाभ'

शिष्य कहे–'कहं लेसहं' गुरु कहे–'जह गहियं पुव्व साहुहिं' शिष्य कहे–'इच्छं आवस्सियाए' गुरु कहे–'जस्स य जोगो' शिष्य कहे–'सिज्जातर ?' गुरु कहे–'अमुकका घर'। यानी जिसका घर सिज्जातर (१) किया हो ? उसका नाम कहे, बादमें गुरुको अभ्युत्थान वंदना तथा आचार्यादि पदस्थको द्वादशावर्त्त वंदना करे–

३—अभ्युत्थान गुरु वंदना विधिः।

दो खमा० देकर "इच्छकार सुहराइ" कहे, खमा० देकर अब्भुट्ठिया खमावे, फिर खमा० देकर 'इच्छकारी भगवन् ! पसाय करी पच्चक्खाणनी आस' कह कर पच्चक्खाण करे, बाद खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! बहुवेल संदिसाउं ?, इच्छं इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि० भग० ! बहुवेल करूं ?, इच्छं' कह कर फिर खमा० देवे। अपनेसे बडे साधुओंको इसी विधिसे वंदना करनी, केवल पच्चक्खाण तथा पिछले तीन खमा० देकर दो आदेश मांगना. यह न करे, क्योंकि जो सबसे बडे (मोटे) हो ? उनके पास

(१) सिज्जातर किसको कहते हैं ? और उसके घरसे कितनी देर बाद कितनी देर तक क्या क्या चीज न लेना ? इसकी हकीकत जाननेके वास्ते नम्बर ४ "सिज्जातर विचार" देखो।

ही पच्चक्खाण आदि-किया जाताहै ।

४—चैत्यवंदन-विधिः—

'निसिही ३' कहते हुए मदिरमें जातेही भगवान्‌को नमस्कार करके तीन प्रदक्षिणा देवे, इरियावही पडिक्कमके तीन खमा० देकर 'इच्छा० सदि० भग० ! चैत्यवंदन करूं ?, इच्छं' कहकर चैत्यवदन कहे, बाद ज किंचि० नमुत्थुणं० जावंति चेइयाइं० जावंत केवि साहू० नमोऽर्हत्० कहकर स्तवन कहे, बादमें "आभवम-खंडा" तक जय वीयराय ! कहकर खडे होकर अरिहंत चेइयाणं० अन्नत्थ० कहकर एक नवकारका काउ-स्सग्गकरे, पारकर नमोऽर्हत्० कहकर एक थुइ कहे, बाद खमा० देकर पच्चक्खाण करना ।

५—उग्घाडा-पेरिसी-विधिः—

छ. घडी दिन चढे बाद गुरुके आगे "उग्घाडा पोरिसी" कहकर इरियावही पडिक्कमे, बाद खमा० देकर एक साधु कहे– 'इच्छा० संदि० भग० ! उग्घाडा पोरिसी' गुरु कहें– 'तहत्ति' फिर खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! पडिलेहण करू ?, इच्छं' इस तरह आदेश मांगकर गुरु मुहपत्ति पडिलेहे बाद सब

जणे खमा० देकर ऊपर मुजब आदेश मांगकर २५ बोलसे मुहपत्ति पडिलेहें।

६—गौचरी–जानेकी तथा आलोचनेकी विधिः—

गौचरीका समय हो जाने पर कंबली बिछाके उस पर पात्रें आदि सब उपकरण छूटे छूटे रखे, बाद झोली पडिलेह कर छेडों के गांठें लगावे, बाद १० बोलसे पूंजणी पडिलेहे, उससे पात्रे-तरपणी-चेतना-डाबडिया आदि २५-२५ बोलसे पडिलेहे, और पडले–रजस्त्राण आदिभी सब उपकरण २५-२५ बोलसे तथा तरपणीका डोरा १३ बोल बोलते हुए पूंजणीसे पडिलेहे, (१) बाद झोली में पात्रे रखकर डाबे हाथमें झोली लेकर ऊपर पडले ढांक देवे और तरपणीभी उसी हाथमें लेकर चद्दरके छेडेसे ढांक लेवे, बाद दंडा हाथमें लेकर 'आवस्सही ३' कहते हुए उपाश्रयसे निकलकर गौचरी जावे।

दंडा भूमि ऊपर टिकाते हुए किसीके साथ बात चीत करते हुए या हँसते हुए रास्तेमें न चले, उतावल

(१) उपवासके दिनभी उग्घाडा पोरिसी भणानेके याद इसी मुजब पात्रे आदिकी पडिलेहणा जरूर करनी चाहिये।

राहित चलते हुए ४२ दोप (१) रहित गौचरी लेकर "निसिही ३ नमो खमासमणाणं" कहते हुए उपाश्रयमें गुरुके पास आकर यदि शक्ति हो ? तो गौचरी हाथमें ही रखे. और शक्ति न हो ? तो गौचरी ठिकाने रख कर आगे लिखे मुजव गौचरी आलोवे—

खमा० देकर इरियावही पडिक्कमे, जितने घरोंसे जिस प्रकार गौचरी ली हो ? वह सब काउस्सगमें याद करे अथवा एक लोगस्स का काउस्सग्ग करे, पारकर प्रगट लोगस्स कहकर वोले–'इच्छा० संदि० भग० । भात पाणि आलोऊँ ?' गुरु कहे–'आलोएह' वाद 'इच्छ' कहकर स्त्री या पुरुषके हाथसे. वाटकी या कुडछीसे जिस तरह गौचरी ली हो ? वह सब हकीकत गुरुके आगे कह सुनावे, वाद "इच्छामि पडिक्कमिउं गोयरच- रियाए० " यह आलावा कहकर तस्स उत्तरि० अन्नत्थ० कहकर काउस्सगमें—

"अहो !! जिणेहि असावज्जा, वित्ति साहूण देसिया । मुक्ख साहण हेउस्स, साहुदेहस्स धारणा १" (दश० ५ अ०, १ उ०)

यह गाथा चितवें, पार कर प्रगट लोगस्स कहे, वाद चौमासे मे पाटको और शेषाकालमें भूमिको पूंज

(१) नम्बर पाच 'आहार-दोप-विचार' देखो ।

कर गौचरीके पात्रे रख कर ऊपर झोली या लुहणा ढांक देवे, बाद उपाश्रयमें काजा निकाल कर निर्जीव भूमि में परठ कर पच्चख्खाण पारे।

७—पच्चक्खाण–पारण–विधिः—

स्थापनाके सामने अथवा गुरु आदि अपनेसे बडेके सामने खमा० देकर इरियावही पडिक्कमे, बाद खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग०! चैत्यवंदन करूं?, इच्छं' कहकर "जयउ सामिय" जंकिंचि० नमुत्थुणं० जावंति चेइयाइं० जावंत केवि साहू० नमोऽर्हत्०और उवसग्गहरं० कहकर "आभवमखडां" तक जय वीयराय! कहे, बाद खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग०! सज्झाय संदि साउं?, इच्छं' इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि० भग०! सज्झाय करूं?, इच्छं' कहकर १ नवकार धम्मो मंगलकी १७ गाथा तथा ऊपर १ नवकार कहे, बाद खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग०! पच्चक्खाण पारवा मुहपात्ति पडिलेहुं?, इच्छं' कहकर मुहपात्ति पडिलेहे, बाद खमा० देकर कहे—'इच्छा० संदि० भग०! पच्चक्खाण पारावह' गुरु कहे—'पुणो वि कायव्वो' बाद 'यथा शक्ति' कहकर फिर खमा० देकर कहे—'इच्छा० संदि० भग०! पच्चक्खाण पारूं?'

गुरु कहे--'आयारो न मोत्तव्वो' वाद 'तहत्ति' कहकर जीमणी मुट्ठि ओघे ऊपर स्थापन कर १ नवकार गिणे. वाद आगे लिखे हुए पच्चक्खाण पारनेके पाठ वोलकर १ नवकार गिणे।

नमुक्कारसहि आदि पच्चक्खाण पारनेका पाठ---

उग्गए सूरे नमुक्कार सहियं पोरसि० साढ पोरसि (सूरे उग्गए पुरिमऽड्ढं-अवड्ढं) मुट्ठि सहियं पच्चक्खाण कर्युं चउव्विहार, आयंविल एकासणुं, निवि एकासणु, एकासणु, वियासणुं पच्चक्खाण कर्युं तिविहार, पच्चक्खाण फासियं, पालियं, सोहियं, तीरियं, किट्टिय, आराहिय, ज च न आराहियं तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

इनमें नमुक्कार सहियसे लगा कर साढपोरसी तकमे जो पच्चक्खाण किया हो ? वहां तकके सब नाम वोलने, आगे के नहीं और यदि पुरिमऽड्ढ या अवड्ढ हो ? तो "सूरे उग्गए--पुरिमऽड्ढं" या "अवड्ढं" जो होवे ? सो वोलना, पहले के नहीं, यदि आयंविल हो ? तो "आयंविल एकासणुं पच्चक्खाण कर्युं तिविहार" तथा निवि हो ? तो "निवि एकासणु पच्चक्खाण कर्युं तिविहार" कहना, इसी तरह एकासणेमें "एकासणु

पच्चक्खाण कर्युं तिविहार" तथा बियासणेमें "बियासणुं पच्चक्खाण कर्युं तिविहार" कहना।

तिविहार उपवासका पच्चक्खाण पारनेका पाठ—

"सूरे उग्गए पच्चक्खाण कर्युं तिविहार, पोरिसी–साढपोरिसी–पुरिमऽड्ढं–अवड्ढं मुट्ठिसहियं पच्चक्खाण कर्युं पाणाहार, पच्चक्खाण फासियं॰" इत्यादि पहलेकी तरह कहना।

बादमें बडे छोटे सब साधुओंको आहार देकर रागद्वेष रहित मंडली के पांच (१) दोष टालकर सुर सुर अथवा चब चब शब्द नहीं करता हुआ, उतावल रहित, देरी नहीं लगाता हुआ, तथा नीचे नहीं विखेरता हुआ आहार पाणी करे. आहार पाणी कर चुकने पर पात्रे तीन चार वार पाणीसे धोकर पाणी पी लेवे. पात्रे दो लूहणोंसे लूस लेवे, लूहणा पाणी में धोकर सुका देवे, बाद पात्रे चौमासा हो ? तो पाट ऊपर रखे. और शेषाकाल हो ? तो शायद अकस्मात् विहारही करना पड़े ? वास्ते बांधकर गुच्छे चढाकर रखे. यदि एकासणा हो ? तो उसी जगह तिविहार पच्चक्खाण कर लेवे।

(१) नाम वगैरह इनका स्वरूप जानना हो ? तो नम्बर ५ 'आहार-दोष-विचार' देखो।

बाद जिस जगह आहार पाणी किया हो ? उसी जगह बैठा हुआ स्थापनाजी के सामने इरियावही पडिक्कमे, खमा० देकर–'इच्छा० संदि० भग ! चैत्यवंदन करूं ?, इच्छं' कहकर "जयउ सामिय" चैत्यवंदन कहे, बाद जं किंचि० नमुत्थुणं० जावंति चेइयाइं० जावंत केवि साहू० नमोऽर्हत्० उवसग्गहरं० तथा "आभवम खंडा" तक जय वीयराय ! कहे।

अष्टमी चउदस आदि उपवास के दिन दुपहरको पांच शक्रस्तवसे देववदन अवश्य करने चाहिये।

८—स्थंडिल जाने की विधिः—

'आवस्सही ३' कहते हुए उपाश्रयसे निकलकर उतावल रहित बात चीत नहीं करते हुए आगे आगे भूमि देखते हुए गांमके बाहर जाकर पवित्र भूमिसे ईंटके टुकड़े आदि पूंज कर लेवे, या उपाश्रयसे ही वस्त्रखण्ड लेजावे बाद दूर जाते हुवे वनस्पति या अन्य (कीडी तथा उद्देही आदि) जीवजंतु रहित जगहमे जाकर ऊंचे नीचे और तिरछे चारों तरफ देख लेवे कि–कोई मनुष्य वगैरह आता जाता तो नहीं है, बाद "अणुजाणह जस्सुग्गहो" ऐसा कहकर ठल्ले बैठे, जिसके फल फूल आते हो ? उस वृक्ष (झाड़) के

नीचे न बैठना, पूर्व तथा उत्तर दिशाके सामने और जिस तरफका पवन चलता हो ? उस तरफ, सूर्य और गांवके सामने पीठ नहीं करनी, बैठते समय दंडा डाबी साथलमें रखे, पाणी की तरपणी जीमणे हाथमें तथा ईंटके टुकड़े या वस्त्रखण्ड डाबे हाथमें रखे, जब कि शंका दूर होजाय ? तब दूर हटकर ईंटके टुकड़ों से या वस्त्रखंडसे शरीर लूस लेवे, बाद पाणीसे शुद्धि करके उठकर दूर आकर 'वोसिरे ३' कहे। बाद 'निस्सिही ३' कहते हुए उपाश्रयमें आकर इरियावही पडिक्कमे और तरपणी लूसकर रख देवे।

९—संध्या-पडिलेहण-विधिः—

पिछले प्रहरमें गुरुके आगे खमा० देकर कहे-'इच्छा० संदि० भग० ! बहुपडिपुन्नापोरिसी' ? गुरु कहे-'तहत्ति'। बाद हमेश (रोज) वापरनेके उपकरण लेकर पासमें रखकर खमा० पूर्वक इरियावही पडिक्कमे, खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! पडिलेहण करूं ?, इच्छं' इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि० भग० ! वसति प्रमार्जूं ?, इच्छं' कहकर मुहपत्ति पडिलेहे, फिर खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! अंग पडिलेहण संदिसाउं ?, इच्छं' इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि० भग ! अंग पडिलेहण करुं ?, इच्छं' कहकर

मुहपत्ति पडिलेहे, बाद कंदोरा (१) तथा चोलपट्टा (२) पडिलेहकर काजा निकाले, काजा परठकर सौ सौ (१००) हाथ तककी भूमिमे सवेरेकी तरह वसति संशोधन करे, जो कोई हड्डी या कलेवर हो ? उसको दूर हटवा कर 'निसिही ३ मत्थएण वंदामि भगवन् ! सुद्धावसही' कहते हुए उपाश्रयमें आकर गुरुके सामने ❊ खमा० देकर इरियावही पडिक्कमे, खमा० देकर कहे—'इच्छा० संदि० भग० ! वसति पवेउं ?' गुरु कहे 'पवेयह' फिर इच्छ इच्छामि खमा० देकर कहे—'भगवन् ! सुद्धावसही' गुरु कहे—'तहत्ति' × बाद स्थापनाचार्यके सामने खमा० देकर 'इच्छकारी भगवन् ! पसायकरी पडिलेहणा पडिलेहावोजी' कहकर स्थापनाचार्य पडिलेहे—

कंबली पडिलेहकर समेटके बिछादेवे, उसपर स्थापनाचार्यजी खोलकर जुदे रखे, बाद समेटी हुई तथा बिछाई हुई मुहपत्तियां जुदी जुदी करके पहले उनकी और पीछे सूतकी मुहपत्ति पडिलेहकर

(१) उपवासके दिन ओघा पडिलेहनेके बाद कंदोरा तथा चोलपट्टा पडिलेहे। (२) साध्वियां चोलपट्टेकी जगह पहरने का साडला पडिलेहे ॥ * इस निशानी से लगाकर × इस निशानी तककी विधि जिसने काजा निकाल कर वसति संशोधन कियाहो ? उसीको करना चाहिये, अन्यको नहीं, सब उपकरण पडिलेहनेके बाद यदि काजा निकाले ? तो यह विधिभी पीछेसेही करे।

उपरा उपरी बिछादेवे, बाद समेटी हुई नीचेवाली मुहपत्ति पडिलेहकर समेटके बिछाई हुई मुहपत्तिमें रखे बाद ऊपरवाली समेटी हुई मुहपत्ति पडिलेहे, उससे सवेरेकी तरह १३ बोलसे स्थापनाचार्य पडिलेहकर पहलेकी समेटी हुई मुहपत्ति पर रखदेवे, ऊपरसे वह दूसरी मुहपत्तिभी समेटकर ढांक देवे, बाद सूतू तथा ऊनी दोनों मुहपत्तियोंसे स्थापनाचार्य बांधकर झोलीमें रखकर ठवणी ऊपर रख देवे।

बाकी रहे सबजणे खमा० देकर 'इच्छकारी भगवन्! पसायकरी पडिलेहणा पडिलेहावोजी' ऐसे कहें।

बाद सबजणे खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग०! मुहपत्ति पडिलेहुं ?, इच्छं' कहकर मुहपत्ति पडिलेहें, फिर खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग०! सज्झाय संदिसाऊं ?, इच्छं' इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि०भग०! सज्झाय करूं ?, इच्छं' कहकर १ नवकार धम्मो मंगलकी ५ गाथा और ऊपर १ नवकार गिणे, दो (१) वांदणे देकर मुट्ठिसहि पच्चक्खाण करे. खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग०! ओहिपडिलेहण संदिसाऊं ?, इच्छं इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि० भग०! ओहिपडिलेहण करूं ?, इच्छं' कहकर चद्दर कंबली आदि सब

(१) उपवास के दिन वांदणे नहीं देने।

उपकरण सवेरेकी तरह पडिलेहे। बाद ओघा खोलकर पहले डोरा १० बोलसे पडिलेहे, बाद उनकी निषद्या (ओघारिया) सूतकी निषद्या (निशिथिया) पाठा तथा ओघेकी दशियां अनुक्रमसे २५-२५ बोलसे पडिलेहे, बाद डंडी १० बोलसे पडिलेह कर ओघा पीछा बांध लेवे, बाद दंडे पडिलेह कर जिस जगह पर कपडे आदि की पडिलेहण करी हो ? उस जगहसे काजा निकालकर एकांतमें परठे, बाद इरियावही पडिक्कमकर मुट्ठि भीडकर १ नवकार गिणे अथवा आगे लिखा पाठ बोलकर मुट्ठिसहि पच्चक्खाण पारे—"मुट्ठिसहि पच्चक्खाण फासिय पालिय सोहिय तीरिय किट्टिय आराहियं जं च न आराहियं तस्स मिच्छामि दुक्कडं" ॥

१०–देवसिय–पडिक्कमण–विधिः—

संध्याको पडिक्कमणेका टाइम होनेपर मातरे जाना हो ? तो जाकर इरियावही पडिक्कमे, बाद गुरुको अथवा सबसे बडेको वंदना करके पच्चक्खाण करे, खमा० देकर कहे–इच्छा० संदि० भग० ! थंडिल पडिलेहुं ?' गुरु कहे–'पडिलेहेह' बाद 'इच्छ' कहकर "आगाढे आसन्ने० " इत्यादि पाठ बोलते हुए ओघेसे २४ मांडले करे. खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! गोचरी आदि पडिक्कमुं ?, इच्छ' इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि०

भग०! गोचरी आदि पडिक्कमणऽत्थं काउस्सग्ग करूं ?, इच्छं गोचरीं आदि पडिक्कमणत्थं करेमि काउस्सग्गं, अन्नत्थ०' कहकर १ नवकारका काउस्सग्ग करे, पारकर प्रगट नवकार १ कहकर आगे लिखी गाथा बोलनी–

"कालो गोयरचरिया, थंडिल्ला वत्थ पत्त पडिलेहा। संभरउ सो साहू, जस्स वि जं किंचिऽणुवउत्तं।१।"

बाद अपनेसे बडोंको सबको वंदना करके इरियावही पडिक्कमे, खमा० देकर कहे–'इच्छा० संदि० भग०! चैत्यवंदन करूं ?' गुरु कहे–'करेह' सब जणे कहें–'इच्छं'। बाद गुरु आज्ञासे कोईभी साधु या श्रावक जय तिहुअणकी पहलेकी ५ गाथा और अंतकी २ गाथा कहे, पीछे गुरु "जय महायस !" इत्यादि २ गाथा कहें, अथवा जय तिहुअणकी गाथायें तथा जय महायस ! ये दोनों गुरु ही कहें, बाद नमुत्थुणं कहकर सवेरे (राइय पडिक्कमणेके अंतमें जैसे ४ थुइसे देववंदन करनेका कहा है उस) की तरह ४ थुइसे देववंदन करे, जिसमें गुरु काउस्सग्ग पारलेवे बाद जिस साधु या श्रावक ने आदेश लिया हो ? वह काउस्सग्ग पारकर पहले तथा छेल्ले नमोऽर्हत्० कहे, और बीचकी दो थुइयों में नमोऽर्हत्० न कहते हुए ४ थुइयां कहे, बाद दूसरे सब साधु–श्रावक काउस्सग्ग पारें। देववंदन कर चुके बाद बैठकर नमुत्थुणं कहकर ४ खमा०

देवे–पहला खमा० देकर 'आचार्य मिश्रं' १। दूसरा खमा० देकर उपाध्याय मिश्रं २। तीसरा खमा० देकर 'वर्तमान गुरून्' ३। चौथा खमा० देकर 'सर्व साधून्' ४। कहे। वाद मस्तक नमाकर दोनों हाथोंसे मुंहपत्ति मुख आगे लगाकर गोडों से वैठा हुआ "सव्वस्स वि देवसिय दुच्चिंतिय दुब्भासिय दुच्चिट्ठिय मिच्छामि दुक्कड" कहे। वाद खडे होकर चारित्राचारकी शुद्धिके लिये करेमि भंते०। इच्छामि ठामि काउस्सग्गं जो मे देवसिओ० तस्स उत्तरि० अन्नत्थ० कहकर काउस्सग्ग करे, उसमें "सयणासणऽन्नपाणे०" इस गाथाको अर्थ सहित १ वार अथवा मूल ३ वार चिंतवे, पारकर प्रगट लोगस्स कहे, वैठकर तीसरे आवश्यककी मुंहपत्ति पडिलेहकर २ वांदणे देवे, वादमें कहे–'इच्छा० संदि० भग०। देवसियं आलोउं ?' गुरु कहे–'आलोएह' वाद–"इच्छं आलोएमि जो मे देवसिओ०" तथा "ठाणे कमणे चंकमणे०" कहे, वाद गुरु "सव्वस्स वि०" वोलदेवे पीछे शिष्यभी "सव्वस्स वि०" इत्यादि वोलता हुआ "इच्छा० संदिसह" तक कहे, वाद गुरु कहे– "पडिक्कमह" शिष्य कहे "मिच्छामि दुक्कडं"। वाद जीमणा गोडा ऊंचा करके वैठकर ओघा तथा मुहपत्ति दोनों हाथोंसे पकडकर मुहपत्ति मुखपर लगाकर शिष्य कहे 'भगवन्! सूत्र कड्ढं ?'

गुरु कहे "कइढेह" शिष्य 'इच्छं' कहकर १-१ अथवा ३-३ नवकार तथा करेमि भंते० ! कहकर "चत्तारि-मंगलं" आदि तीन आलावे कहे, वाद "इच्छामि पडिक्कमिउं जो मे देवसिओ०" तथा "इच्छामि पडिक्क-मिउं इरियावहियाए०" कहकर राइय पडिक्कमणेकी तरह पगामसिज्जाए कहे, तीन जगह देवसीका पाठ उपयोग रख कर बोले और २ बार वांदणे देकर अब्भुट्ठिया खमाकर फिर २ वांदणा देवे।

यदि श्रावकभी साथ हो? तो "आयरिय उवज्झाए" कहे अन्यथा न कहे वाद चारित्राचारकी शुद्धि के लिये करेमि भंते० ! इच्छामि ठामि काउस्सग्गं जो मे देवसिओ० तस्स उत्तरि० अन्नत्थ० कहकर दो लोगस्स का काउस्सग्ग करे, पारकर दर्शनाचारकी शुद्धिके लिये प्रगट लोगस्स० सव्वलोए अरिहंत चेइयाणं० अन्नत्थ० कहकर १ लोगस्सका काउस्सग्ग करे, पारकर ज्ञानाचारकी शुद्धिके वास्ते पुक्खरवरदीवड्ढे० सुअस्स भगवओ करेमि काउस्सग्गं० वंदणवत्तिआए० अन्नत्थ० कहकर फिर १ लोगस्सका काउस्सग्ग करे, पारकर सिद्धाणं बुद्धाणं० कहकर 'सुयदेवयाए करेमि काउस्सग्गं' अन्नत्थ० कहकर १ नवकारका काउसग्ग करे, गुरु पारकर नमोऽर्हत्० कहकर "सुवर्णशालिनी देयात्, द्वादशांगी जिनोद्भवा। श्रुतदेवी सदामह्य,-मशेषः श्रुतसम्पदम् ॥ १ ॥

यह अथवा "सुयदेवयाए भगवई०" यह थुइ कहे, बाकीके सबजणे थुइ सुणकर काउस्सग्ग पारें, बाद 'खित्त देवयाए करेमि-काउस्सग्गं' अन्नथ० कहकर १ नवकारका काउस्सग्ग करे, पारकर नमोऽर्हत्० कहकर— "यासां क्षेत्रगताः संति, साधवः श्रावकादय.। जिनाज्ञां साधयतस्ता, रक्षंतु क्षेत्रदेवता ॥१॥" यह थुइ अथवा "जीसेखित्ते साहु०" यह थुइ कहे, बाद सबजणे पारकर प्रगट १ नवकार कहें, वैठकर छट्ठे आवश्यककी मुहपत्ति पडिलेहकर २ वांदणे देवे, गुरु 'इच्छामो अणुसट्ठिं' कहकर गोडों से वैठकर अथवा डावा गोडा ऊंचा करके आसन उपर वैठकर नमोर्हत्० कहकर "नमोऽस्तु वर्द्धमानाय" (१) की एक गाथा कह देवे बाद सबजणे 'नमो खमासमणाण नमोऽर्हत्०' कहकर "नमोऽस्तु वर्द्धमानाय" की ३ गाथा कहें। बाद गुरु खमा० देकर यदि स्तवन खुदही बोलें ? तो 'इच्छा० संदि० भग० स्तवन भणु ?, कहें और यदि अन्य साधु या श्रावकको आदेश देवें ? तो 'इच्छा० संदि० भग० स्तवन साभलुं' कहे, बाद सब जणे खमा० देकर स्तवन बोलने

(१) "नमोऽस्तु वर्द्धमानाय" के बदले साध्वियां "संसार दावा" कहतीहैं, उसकी भी १ गाथा पहले गुरुणी बोल देवे बाद दूसरी साध्वियां तीनों गाथा कहें।

वाला तो—'इच्छा० संदि० भग० स्तवन भणुं ?' कहे और दूसरे सबजणे 'इच्छा० संदि० भग० स्तवन साभलुं ?' कहें । यदि दूसरेको आदेश दिया हो ? तो गुरु 'भणेह सुणेह' कहें और यदि दूसरेको आदेश न दिया हो ? तो केवल 'सुणेह' ऐसाही कहें. बाद स्तवन बोलनेवाला नमोऽर्हत्० कहकर ११ गाथासे लगाकर एक सो आठ गाथा तकका कोईभी भगवानका स्तवन (२) कहे, कितनेएक "वर कनक शंख विद्रुम" यह गाथा भी पीछेसे कहते हैं, बाद पहला खमा० देकर 'आचार्य मिश्रं' । दूसरा खमा० देकर 'उपाध्याय मिश्रं' तीसरा खमा० देकर 'सर्व साधून्' कहे ।

विशेष-विधिः—

बाद चौथा खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! देवसिय पायच्छित्त विसोहणत्थं काउस्सग्ग करूं, ? इच्छं देवसिय पायच्छित्त विसोहणत्थं करेमि काउस्सग्गं अन्नत्थ०' कहकर ४ लोगस्सका काउस्सग्ग करे, पारकर प्रगट लोगस्स कहे । बाद खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! 'खुद्दोवद्दव ओहडावणत्थं काउस्सग्ग करूं ? इच्छं

(२) विहारके दिन तथा पख्खी चौमासी और संवच्छरीके पहले दिन स्तवनकी जगह "उल्लासिक्कम" स्तोत्र कहनेकी आज कल प्रवृत्ति है ।

खुद्दोवद्दव ओहडावणत्थ करेमि काउस्सग्ग' अन्नत्थ० कहकर ४ लोगस्सका काउस्सग्ग करे, पारकर प्रगट लोगस्स कहे । फिर खमा० देकर सज्झायके २ आदेश बोले, बाद गुरु अथवा गुरुने जिसको आदेश दिया हो ? वह साधु सज्झाय (१) कहे । बाद खमा० देकर इच्छा० संदि० भगवन् चैत्यवंदन करू ? इच्छं कहकर 'श्रीसेढी तटिनी तटे" यह चैत्यवदन कहकर नमुत्थुणं० जावंति चेइयाइं० जावत केवि साहू० नमोऽर्हत्० कहकर "उवसग्गहरं०" अथवा पार्श्वनाथस्वामीका छोटा स्तवन कहे और जय वीयराय ! कहे, बाद " सिरिथंभणयट्ठिय पास" इत्यादि २ गाथा कहकर वंदणवत्तिआए० अन्नत्थ० कहकर ४ लोगस्सका काउस्सग्ग करे, पारकर प्रगट लोगस्स कहे । खमा० देकर 'श्रीचतुरशीति गच्छ शृंगारहार जगम जुगप्रधान भट्टारक दादाजी श्रीजिनदत्तसूरिजी चारित्र चूडामणि आराधना निमित्त करेमि काउस्सग्गं, अन्नथ०' कहकर १ लोगस्सका

(१) जिस दिन विहार करके दूसरी जगहमें जाय ? उस दिन तथा परखी, चौमासी और सवच्छरीके पहिले दिनतो धम्मो मगल की १७ गाथा कहे और परखी, चौमासी तथा सवच्छरीके दिन ५ गाथा कहे, अन्य दिन खुशी आवे सो सज्झाय कहे ।

काउसग्ग करे, पारकर प्रगट लोगस्स कहे फिर खमा ० देकर 'श्रीचतुरशीति गच्छ श्रृंगारहार जंगम जुगप्रधान भट्टारक दादाजी श्रीजिनकुशलसूरिजी चारित्र चूडामणि आराधना निमित्तं करोमि काउसग्गं' अन्नत्थ ० कहकर १ लोगस्सका काउसग्ग करे, पारकर, प्रगट लोगस्स कहे। फिर खमा ० देकर 'अविधि आशातना हुई होय ते सवि हुं मने वचने कायाए करी मिच्छामि दुक्कडं' कहे ॥

११–राइय–संथारा–पोरिसी–विधिः—

एक साधु खमा० देकर कहे– 'इच्छा० संदि ० भग० ! बहुपडिपुन्ना पोरिसी' गुरु कहे 'तहत्ति'। बाद सब जणे खमा ० देके इरियावही पमिक्कमे, खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! राइय संथारा मुहपत्ति पडिलेहुं ?, इच्छं' कहकर मुहपत्ति पडिलेहें, बाद खमा० देकर 'इच्छा ० संदि० भग० ! राइय संथारा संदिसाउं ?' 'इच्छं' इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि० भग ! राइय संथारा ठाउं' ? इच्छं इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि० भग० ! चैत्यवंदन करूं ? इच्छं' कहकर "चउक्कसाय" तथा– "अर्हंतो भगवंत इंद्रमहिता" यह श्लोक बोलकर नमुत्थुणं ० जावंति चेइया- इं० जावंत केवि साहू० नमोऽर्हत्० उवसग्गहरं० तथा जय वीयराय ! कहे, बाद "निसिही३ नमो खमासमणाणं

गोयमाइण महामुणिणं" इस तरह कहकर ३ नवकार तथा ३ करोमि भंते ! कहे, वाद "अणुजाणह जिट्ठिज्जा, अणुजाणह परमगुरु !' इत्यादि पोरिसीकी गाथायें कहकर ३ नवकार गिणें॥

१२–पाक्षिकादि–प्रतिक्रमण–विधिः—

पक्खी, चोमासी और सवच्छरी तीनोंमें चैत्यवंदनके समय जय तिहुअणकी तीसों [३०] गाथा कहनी, और थुइयोकी जगह "द्रंद्रंकि" ये थुइयां कहनी, वाकी पगामसिज्जाए कहने तक सव देवसीय पमिक्कमणेका विधि करना, पगामसिज्जाए कह चुके वाद खमा०देकर 'देवासियं आलोइयं पडिक्कंतं इच्छा० सदि० भग० ! (१) पक्खी+ मुहपत्ति पडिलेहु ?, इच्छं' कहकर मुहपत्ति पडिलेहकर दो वांदणे देवे, वाद वृद्ध साधु कहे 'पुन्यवंतो वदवेसीने स्थानके पक्खी+ भणजो, छींक जयणा करजो, मधुर स्वरे पडिक्कमजो' दूसरे सव जणे कहे 'तहत्ति' वाद दो वांदणे (२) देकर खडे होकर इच्छा० सदि० भग० ! संवुद्धा खामणेणं अब्भुट्ठिओमि अब्भितर पक्खिय

(१) जहा जहा + ऐसी चोकडिकी निशानी है वहा वहा सव जगह चौमासी हो ?, तो चौमासीका और सवच्छरी हो ? तो सवच्छरी का नाम लेना। (२) दो वादणे देते समय पक्खीमें – "पक्खो वइक्कतो – पक्खिय वइक्कम – पक्खियाए आसायणाए"। चौमासीमें – "चोमासी

खामेउं ? इच्छं खामेमि पक्खियं (१) "एगस्स पक्खस्स, पनरसण्हं दिवसाणं, पनरसण्हं राईणं, जं किंचि अप्पत्तियं" इत्यादि पहले गुरु खमा लेवे बाद शिष्यभी पक्खी चौमासी और संवच्छरीमें अनुक्रमसे गुरु आदि तीन पांच और सात साधुओंको इसी तरह खमावे, इसमें यह खयाल रखना कि—पक्खी चौमासी और संवच्छरी तीनोंमें अनुक्रमसे तीन पांच और सात साधुओंको खमाते हुए अंतमें कमसे कम दो साधु बाकी रखने।

वइक्कंता—चोमासियं वइक्कमं चोमासियाए आसायणाए"। संवच्छरीमें—"संवच्छरो वइक्कंतो—संवच्छरियं वइक्कमं—संवच्छरियाए आसायणाए"। इस तरह तीनों जगह पर उपयोग रख कर पक्खी, चौमासी वा संवच्छरी जो होवे ? उसका नाम बोलना।

(१) चौमासीमें —"चोमासियं खामेउं ? इच्छं खामेमि चोमासियं" कहकर यदि चार [४] महिनों का चौमासा होवे ? तो "चउण्हं मासाणं, अट्ठण्हं पक्खाणं वीसुत्तरसय [१२०] राइंदियाणं" कहकर "जं किंचि अपत्तियं" आदि कहे, और यदि पांच [५] महीनोंका चौमासा हो ? तो "पंचण्हं मासाणं, दसण्हं पक्खाणं, पन्नासुत्तरसय [१५०] राइंदियाणं" कहकर "जं किंचि अपत्तियं" आदि कहे, संवच्छरीमें—"संवच्छरियं खामेउं ? इच्छं खामेमि संवच्छरियं" कहकर जिस वर्षमें १२ महिने हुए होवे ? उस वर्षमें "बारसण्हं मासाणं, चउवीसण्हं पक्खाणं, तिन्निसय सट्ठि [३६०] राइंदियाणं" कहकर "जं किंचि अपत्तियं" आदि कहे और जिस वर्षमें १३ महिने हुए हो ? उस वर्षमें "तेरसण्हं मासाणं, छव्वीसण्हं पक्खाणं, तिन्निसयनउई (३९०) राइंदियाणं" कहकर "जं किंचि अप्पत्तियं" कहे। पत्तेय खामणेणं और समास खामणेणंमेंभी इसी मुजब समझना—

बाद खडे होकर आसनके पिछले भागमें जाकर 'इच्छा० संदि० भग०। पक्खियं (१) आलोउ ? इच्छं आलोएमि जो मे पक्खिओ०' इत्यादि ' मिच्छामि दुक्कड ' तक कहकर 'इच्छा० संदि० भग०। पक्खि (२) अतिचार आलोउ ? ' ऐसा कहकर अतिचार कहे, बाद श्रावकोके अतिचार श्रावक कहें, बाद मे गुरु कहें—

एव कारे साधुतणे धर्मे एकविध असंजम तेत्रीश आशातना प्रमादपद पर्यंत मूलगुण उत्तरगुण एकसो चालीस अतिचार [श्रावक (३) तणे धर्मे समकीत मूल बारे व्रत एकसो चौवीस अतिचार] मांहि जे कोइ अतिचार पक्ष (४) दिवस माहि सूक्ष्म बादर जाणता अजाणता हुओ होय ते सवि हु मने वचनें कायाए करी मिच्छामि (५) दुक्कडं । "

---

(१) चौमासी में 'चोमासिय आलोउ ? इच्छ आलोएमि जो मे चोमासिओ' इत्यादि कहे, और सवच्छरी में ' सवच्छरिय आलोउ ? इच्छ आलोएमि जो मे सवच्छरिओ' इत्यादि कहे। (२) चौमासी में चोमासी का और सवच्छरी में सवच्छरी का नाम बोलना। (३) श्रावक साथमें होवे ? तो यह ब्राकिटमें का पाठ बोलना, अन्यथा नहीं। (४) चौमासी हो ? तो "चोमासी दिवस माहि" और सवच्छरी हो ? तो "सवच्छरी दिवस माहि" कहना। (५) साधु श्रावक सब जणे "मिच्छामि दुक्कड" कहे।

बाद गुरु " सव्वस्स वि (१) पक्खिय" इत्यादि कह देवे पीछेसे शिष्य " सव्वस्स वि पक्खिय " इत्यादि कहे बोलता हुआ " इच्छा० संदिसह" तक कहे, बाद गुरु ' चउत्थेण (२) पडिक्कमह ' कह देवे पीछे शिष्य 'तस्स मिच्छामि दुक्कडं' बाद दो वांदणे देवे और 'इच्छा० संदि० भग०! देवसियं आलोइयं पडिक्कंतं पत्तेय खामणेणं अब्भुट्ठिओमि अब्भिंतर पक्खियं खामेउं ?, इच्छं खामेमि पक्खियं इत्यादि संबुद्धा खामणेणंकी तरह पहले गुरु खमा लेवे बाद शिष्यभी अपनेसे बडे सब साधुओंको इसी मुजब अब्भुट्ठिया खमावे, श्रावकोंके साथभी मुह जबानीसे क्षमत क्षामणे करे, दो वांदणे देकर ' इच्छा० संदि० भग० ! देवसियं आलोइयं पडिक्कंतं पक्खियं (३) पडिक्कमावेह' गुरु कहे ' सम्मं पडिक्कमह ' शिष्य कहे– ' इच्छं ' । बादमें जिसने पक्खिसूत्र बोलने का आदेश लिया हो ? वह साधु करेमि भंते ! तथा 'इच्छामि पडिक्कमिउं जो मे पक्खिओ (४)' इत्यादि

---

(१) चौमासी में "चोमासिय" और संवच्छरी में "संवच्छरिय" कहना (२) चौमासी में "छट्ठेण०" और संवच्छरी में "अट्ठमेण" कहना. (३) चौमासी में " चौमासियं पडिक्कमावेह " और संवच्छरी में "संवच्छरियं पडिक्कमावेह कहना । (४) चौमासी में "चोमासिओ" और संवच्छरी में " संवच्छरीओ" कहना ।

कहे, बाद खमा० देकर ' इच्छा ० संदि ० भग ० ! पक्खी (१) सूत्र संदिसाउं ? इच्छं इच्छामि खमा ० ' इच्छा० सदि० भग० ! पक्खी सूत्र कड्डुं ? इच्छं' कहकर ३ नवकार गिण कर पक्खी सूत्र कहे, जो सुनने वाले होवे ? वे तस्सउत्तरि०तथा अन्नत्थ० कहकर काउसग्गमे खड़े खडे सुणे, यदि खडे रहने की शक्ति न हो ? तो वैठकर सुणें, पक्खी सूत्र बोल जाने के बाद " सुयदेवया भगवइ " यह गाथा बोलने के समय सब जणे खड़े होकर काउसग्ग पारकर ३ नवकार गिणें, बादमे वैठकर ३ नवकार ३ करेमि भंते ! तथा " चत्तारि मगलं० " आदि कह कर " इच्छामि पडिक्कमिउं जो मे पक्खिओ " तथा " इच्छामि पडिक्कमिउं इरियावहियाए " कहकर पगामसिज्जाए (२) कहे। खमा ० देकर कहे– 'इच्छा० सदि० भग० ! मूलगुण उत्तर गुण अतिचार विशुद्धि निमित्त काउस्सग करू ?' गुरु कहे–'करेह' बाद 'इच्छं' कहकर करेमि भंते ! इच्छामि ठामि

(१) चौमासी में " चोमासी सूत्र " और सवच्छरी में " सवच्छरी सूत्र " बोलना। (२) पहले और तीसरे आलावेके अतमें " जो मे पक्खिओ, जो मे चोमासिओ, जो मे सवच्छरिओ०" इत्यादि तथा "तस्स धम्मस्स" कहकर खडे हुए बाद "तस्स सव्वस्स पक्खियस्स, तस्स सव्वस्स चोमासियस्स, तस्स सव्वस्स सवच्छरियस्स " इत्यादिमें पक्खी, चौमासी या सवच्छरी जो होवे ? उसका नाम बोलना।

काउस्सग्गं जो मे पक्खिओ० तस्स उत्तरि० अन्नत्थ० कहकर १२ लोगस्सका (१) काउसग्ग करे, पारकर प्रगट लोगस्स कह कर पख्खी समाप्त मुहपत्ति पडिलेहे, दो वांदणे देवे, बाद 'इच्छा ० संदि ० भग ० ! समाप्त खामणेणं अब्भुट्ठिओमि अभिंतर पख्खियं खामेउं ? इच्छं खामेमि पख्खियं ' इत्यादि पहलेकी तरह गुरु खमा लेवे बाद शिष्यभी पक्खी, चौमासी और संवच्छरीमें अनुक्रम से गुरु आदि तीन पांच तथा सात साधुओंको खमावे । बाद 'इच्छा० संदि० भग० ! पख्खी समाप्त खामणा खामुं?' ऐसा पहले गुरु बोल जाय पीछे शिष्य भी इसी मुजब कहे, बाद गुरु कहे – 'खामेह' शिष्य 'इच्छं' कहकर आगे लिखे मुजब ४ खामणे खमावे.

खमा० देकर गोडोंसे बैठा हुआ डावे हाथसे मुहपत्ति मुखपर लगाकर जीमणा हाथ गुरुके सामने ओघेके उपर स्थापन कर "इच्छामि खमासमणो पियं च मे जं भे" इत्यादि पहला खामणा पूरा कहे, बाद गुरु कहें– "तुब्भेहिं समं" दूसरा खमा० देकर "इच्छामि खमासमणो पुव्विं चेइयाइं वंदित्ता" इत्यादि दूसरा

(१) चौमासी में २० लोगस्स का और संवच्छरीमें ४० लोगस्स तथा ऊपर एक नवकारका काउसग्ग करना ।

खामणा कहे, बाद गुरु कहे– "अहमवि वंदामि चेइयाइं"। तीसरा खमा० देकर "इच्छामि खमासमणो अब्भुट्ठिओमि तुब्भण्हं संतिय" इत्यादि तीसरा खामणा कहे, बाद गुरु कहे– "आयरिय संतियं"। चौथा खमा० देकर "इच्छामि खमासमणो अहमवि पुव्वाइं" इत्यादि चौथा खामणा कहे, बाद गुरु कहे "नित्थारग पारगा होह" बाद खडे होकर कहे– 'इच्छकारी भगवन्! पसाय करी पक्खी तप (१) प्रसाद करावोजी' गुरु कहे 'पुन्यवंतो! पक्खीने (२) लेखे १ उपवास, २ आयंबिल, ३ निवी, ४ एकासणा, ८ बियासणा, 'बे हजार सज्झाय करी १ उपवासनी पयठ पूरजो'। जिन्होंने उपवास किया हो? वे तो कहें–'पयट्ठिओ' अन्य सब जणे कहें – 'तहत्ति'। बाद गुरु कहे– 'पक्खिय (३) समत्त, देवसियं भणिज्जाहि सब जणे कहें– 'इच्छामो अणुसट्ठिं'।

(१)–चौमासी अथवा सवच्छरी हो? तो उनका नाम लेना। (२) चौमासी में – "चौमासी ने लेखे २ उपवास, ४ आयबिल, ६ निवि, ८ एकासणे, १६ बियासणे चार हजार सज्झाय करी बे उपवासनी पयठ पूरजो" ऐसा कहे। सवच्छरी में–"सवच्छरी ने लेखे ३ उपवास, ६ आयबिल, ९ निवी, १२ एकासणे, २४ बियासणे छ हजार सज्झाय करी तीन उपवासनी पयठ पूरजो ऐसा कहे। (३) चौमासी में "चौमासिय समत्त" और सवच्छरीमें "सवच्छरिय समत्त" कहना।

आषाढ चौमासीमें खमा ० देकर ' इच्छा ० संदि ० भग ० ! पीठफलग संदिसाउं ? इच्छं इच्छामि खमा ०, इच्छा ० संदि ० भग ० ! पीठ फलग पडिग्गहुं, ? इच्छं' ऐसा कहना , और कार्त्तिक चौमासीमें खमा ० देकर कहे ' इच्छा० संदि ० भग ० ! पीठफलग विसर्जूं ?' गुरु कहे– ' विसर्जेह ' बाद ' इच्छं ' कहना, पक्खी तथा फागण चौमासी और संवच्छरीमें ये आदेश नहीं कहने ।

बाद दो बांदणे देकर अम्भुट्ठिया खमाना आदि हमेशां की तरह देवसिय पडिक्कमणेका सब विधि करना, इतना विशेष है कि–सुयदेवी और क्षेत्रदेवी के काउसग्गके बीचमें 'भवण देवयाए करोमि काउस्सग्गं, अन्नत्थ'० कहकर नवकारका (१) काउसग्ग करे, गुरु पार कर नमोऽर्हत् ० कहकर " ज्ञानादिगुण युतानां" यह थुई कहे, ऐसे ' प्रतिक्रमण हेतु गर्भ ' आदिकमें कहा है। सुयदेवी की थुइ "कमलदल विपुलनयना, कमल मुखी कमलगर्भसमगौरी । कमले स्थिता भगवती, ददातु श्रुतदेवता सौख्यम् " १ । और क्षेत्र देवीकी थुइ

(१) – विहार के दिन भी सुयदेवी और क्षेत्र देवीके बीच में भवण देवी का काउसग्ग करे, परंतु थुई " चतुवर्णाय संघाय, देवी भवनवासिनी । निहत्य दुरितान्येषा, करोतु सुखमक्षतम् १ ।" यह कहे।

"यस्या क्षेत्रं समाश्रित्य" यह कहना, "नमोऽस्तु वर्द्धमानाय" के तीनों श्लोक गुरु बोल जाये बाद सब जणे बोलें। स्तवन की जगह पर अजिसंता कहें। खुद्दोवद्दव० काउस्सग करे बादे खमा० देकर इच्छा० सदि० भग० ! असज्झाइय (१) अणाउत्त ओहडावणत्थं काउस्सगं करूं?, इच्छ असज्झाइय अणाउत्त ओहऽडावणऽत्थं करेमि काउस्सगं, अन्नत्थ० कहकर ४ लोगस्सका काउस्सग करे, पार के प्रगट लोगस्स कहे, बाद सज्झाय करे, सज्झाय में धम्मो मंगल की ५ गाथा कहें, पार्श्वनाथ स्वामी का चैत्यवंदन करते हुए स्तवन के बदले उवसग्गहरंही कहना॥

१३– छींकदोप निवारण विधि.–

पक्खी–चौमासी अथवा सवच्छरी मुहपत्ती पडिलेहणेसे लगाकर अंतमे ४ खामणे खामे वहांतक

(१) सवच्छरीमें तो असज्झायका काउस्सग करना ही नहीं "पक्खी तथा चौमासी में यदि असज्झाय न होवे ? तो असज्झाय का काउसग्ग करना चाहिये," ऐसा समाचारी शतकमें कहा है, इससे यह समझा जाता है कि आषाढ और कार्तिक चौमासी में तो हमेशा ११ पहोरका असज्झाय होता है वास्ते असज्झायका काउसग्ग नहीं करना और फागण चौमासीमें–चौमासीके दिनही लोकमें यदि होली सलगाइ जाय ? तो उस दिन काउस्सग्ग नहीं करना, परन्तु चौमासी के दूसरे दिन यदि होली सलगाइ जाय ? तो चौमासीके दिन असज्झायका काउस्सग जरूर कर लेना अन्य पक्खी के दिन यदि किसी तरहका असज्झाय न होवे ? तो करना, अन्यथा नहीं करना।

एक मंडलीके साधु–साध्वी–श्रावक-श्राविकाओंमें से यदि किसी को छींक होवे ? तो पडिक्कम्मणा पूरा होने के बाद आगे लिखे मुजब तीन काउस्सग्ग करने–खमा० देकर ' इच्छा ० संदि ० भग ० ! अपशकुन दुर्निमित्तादि ओहडावण निमित्तं काउस्सग्गं करूं ?, इच्छं अपशकुन दुर्निमित्तादि ओहडावण निमित्तं करेमि काउस्सग्गं, अन्नत्थ०' कहकर १ नवकार का काउस्सग्ग करे, पारकर प्रगट १ नवकार कहे । दूसरा खमा० देकर फिर इसी मुजब २ नवकार का काउस्सग्ग करके प्रगट २ नवकार कहे । तीसरा खमा० देकर ऊपर लिखे मुजब ही ३ नवकारका काउस्सग्ग करके प्रगट ३ नवकार कहे ।

इस प्रकार ये तीन काउसग्गतो पडिक्कमणा करने वाले सब जणे करें, और जिसको छींक हुई हो ? उसके वास्ते यह है कि–छींक यदि पक्खी में होवे ? तो १५ दिन तक, चौमासीमें होवे ? तो ४ महिने तक और संवच्छरी में होवे ? तो १ वर्ष तक अपनी शक्ति के अनुसार कुछ विशेष तपस्या भी करनी चाहिये ॥

१४– मार्जारी मंडली प्रवेश दोष निवारण विधिः–

पांचों पडिक्कमणोंमेंसे कोईभी पडिकमणा करते हुए स्थापनाचार्य और पडिकक्कमणा करने वालों के

बीचमेंसे यदि बिल्ली निकले ? तो उसी समय आगे लिखा हुआ विधि करना—

"जा सा काली कब्बडी, अख्खिहि कक्कडियारी। मडल माहे सचरी हय पडिहय मज्जारी ॥ १ ॥"

यह सपूर्ण गाथा १ वार कहे और इसीका चौथा पद ३ वार कहे, बाद खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! खुद्दोवद्दव ओहडावणत्थं काउस्सग्ग करू ?, इच्छं, खुद्दोवद्दव ओहडावणत्थं करेमि काउस्सग्गं, अन्नत्थ० कहकर ४ लोगस्सका काउस्सग्ग करे, पारकर प्रगट लोगस्स कहकर शांति कहे। अथवा पडिक्कमणा पूरा होजाने के बाद छींकके विधिमें कहे अनुसार अपशकुनादि निमित्त तीन (३) काउस्सग्ग करे, बाद उपर लिखी गाथा तीन (३) वार पूरी कहे और डावे पैरसे जमीन को दबावे ॥

१५-द्वादशावर्त्त वदना विधिः—

गुरुके आगे आधा नमकर "इच्छाकारेण संदिसह भगवन् !, ((१) लाभ), कह लेसहं ?, (जह गहिय पुव्व साहूहिं), आवस्सियाए, (जस्स य जोगो), सिज्जातर ?, (अमुक)" इतना कहे बाद खमा० देकर

(१) ये ब्राकीट ( ) में के शब्द तो गुरुके बोलनेके हैं और ब्राकीट से बाहर के शब्द शिष्यके बोलनेके हैं।

राइमुहपत्ति पडिलेहे और दो वांदणे देवे, बाद 'इच्छा०संदि०भग० ! राइयं आलोउं ?' इच्छं आलोएमि जो मे राइओ० कहकर "सव्वस्स वि राइय" इत्यादि कहे, बाद दो वांदणे देकर दो खमासमण देवे और "इच्छकार सुहराइ" कहकर खमा० देकर अब्भुट्ठिया खमाकर दो वांदणे देकर पच्चखाण करे, बाद खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! बहुवेल संदिसाउं ?' इच्छं इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि० भग० ! बहुवेल करूं ?' इच्छं, कहकर खमा० देवे ।

१६–पाक्षिकादि गुरुवंदना विधिः—

जिन साधुओंने पक्खी, चौमासी अथवा संवच्छरी पडिक्कमणा गुरुसे जुदा किया हो ? वे साधु दूसरे दिन सवेरे गुरुके सामने इरियावही पडिक्कमकर खमा० देकर राइ मुहपत्ति पडिलेहें, दो वांदणे देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! राइयं आलोउं ?' इच्छं आलोएमि जो मे राइओ० कहकर "सव्वस्स वि राइय" इत्यादि कहें । खमा० देकर पक्खी, चौमासी अथवा संवच्छरी मुहपत्ति पडिलेहकर दो वांदणे देकर 'संबुद्धाखामणेणं

अब्भुट्ठिया खमावें, बाद 'इच्छा० संदि० भग० ! पक्खियं आलोउं ?' इच्छं आलोएमि जो मे पक्खिओ कहकर "सव्वस्स वि पक्खिय" इत्यादि कहें। फिर दो वांदणे देकर 'इच्छा० सदि० भग० !' राइय आलोइयं पडिक्कत पत्तेयखामणेण अब्भुट्ठिओमि अभिंतर पक्खियं खामेउं' ? इत्यादि जिसतरह पक्खी आदि पडिक्कमणों में खमाते हैं उसी तरह पत्तेयखामणेणं अब्भुट्ठिया खमावे, दो वांदणे देकर 'इच्छा० सदि० भग० ! राइय आलोइय पडिक्कंत पक्खिय पडिक्कमावेह' कहे, गुरु कहे–'पडिक्कमेह' बाद 'इच्छ' कहकर करेमि भंते० ! तथा "इच्छामि पडिक्कमिउ जो मे पक्खिओ०" कहे, बाद पक्खी, चौमासी अथवा संवच्छरी समाप्त मुहपत्ति पडिलेहकर दो वांदणे देवें और समाप्त खामणेणं अब्भुट्ठिया खमावें, बाद खमा० देकर "पियं च मे जं भे" इत्यादि ४ खामणे खमावें, बाद 'इच्छकारी भगवन् ! पसायकरी पक्खी, चौमासी या संवच्छरी तप प्रसाद करावोजी' ऐसा कहें, बाद गुरु 'पक्खी, चौमासी, संवच्छरीके लेखे-१–२–३ उपवास' इत्यादि कहें। राइ वांदणे देकर दो खमा० देवे और "इच्छकार सुहराइ" कहे, खमा० देकर राइ अब्भुट्ठिया खमावें, वांदणे देकर पच्चक्खाण करें, बाद दो खमा० देकर 'बहुवेल सदिसाउ ? बहुवेलकरू ?' ऐसा कहें ॥

१७-सचित्त-अचित्त रज ओहडावण विधिः—

देवसी पडिक्कमणा होजानेके बाद खमा० देकर 'इच्छा०संदि० भग० ! सचित्त अचित्त रज ओहडावणऽत्थं काउस्सग्ग करूं ?, इच्छं सचित्त अचित्त रज ओहडावणऽत्थं करेमि काउस्सग्गं, अन्नत्थ०' कहकर ४ लोगस्स का काउस्सग्ग करके, पार कर प्रगट लोगस्स कहे। वर्ष भरमें एक बार चैत्र सुदी ग्यारस, बारस और तेरस अथवा बारस, तेरस और चौदस अथवा तेरस, चौदस और पूनमके दिन यह काउस्सग्ग करना चाहिये। कदाचित् ग्यारस और बारसके दिन भूल जावे ? तो भी तेरस, चौदस और पूनमके दिन तो जरूर ही करना चाहिये, यदि तेरसके दिन भी भूलजाय ? तो दूसरे वर्षकी चैत्री पूनम तक जब रजोवृष्टि होवे तब सूत्र पढना, सज्झाय करना नहीं कल्पता, ऐसा आवश्यक बृहद्वृत्ति वगेरहमें लिखा है

१८-सज्झाय- निक्षेप-विधिः—

साल भरमें दो वार चैत्र सुदी तथा आसोज सुदी पांचम के दिन दुपहर बाद इरियावही पडिक्कमके खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग० ! सज्झाय निखिवणऽत्थं मुहपत्ति पडिलेहुं ?' इच्छं, कहकर मुहपत्ति

पडिलेहे और वांदणे देवे, खमा० देकर कहे– 'इच्छा० सदि० भग०। सज्झाय निक्खिवु?' गुरु कहे 'निक्खिवह' बाद 'इच्छ' कह कर खमा० देकर कहे– 'इच्छा० सदि० भग०। सज्झाय निक्खिवणऽत्थ काउसग्ग करू?' गुरु कहे– 'करेह' बाद 'इच्छं सज्झाय निक्खिवणऽथ करेमि काउस्सग्गं, अन्नत्थ०' कहकर १ नवकारका काउस्सग्ग करे, पारकर प्रगट नवकार १ कहे, फिर खमा० देकर अविधि आशातना खमावे ॥

१९–सज्झाय–उत्क्षेप-विधिः–

कार्तिक वदी तथा वैशाख वदी एकम के बाद जिस दिन अश्विनी, भरणी, रोहिणी, आर्द्रा, पुष्य, अश्लेषा, मघा, पूर्वा फाल्गुनी, हस्त, स्वाति, अनुराधा, मूल, पूर्वाषाढा, श्रवण, शतभिषक्, उत्तरा भाद्रपद तथा रेवती इनमें से कोई भी नक्षत्र होवे ?, और गुरुवार या सोमवार होवे ? उस दिन, अथवा मगलवार और शनिवार को छोड कर चाहे जिस वार के दिन कपडे धाकर उपासरेमें से काजा निकालकर परठे और वसति संशोधन करे, जो कोई हाडका या कलेवर होवे ? उसको दूर हटवाकर उपासरेमें आकर सब जणे इरियावही पडिक्कमे, बादमें वसति सशोधन करने वाला खमा० देकर कहे 'इच्छा० संदि० भग०। वसति पवेउ?'

गुरु कहे – ‘ पवेयह ’ इच्छं इच्छामि खमा० देकर कहे– ‘ भगवन् ! सुद्धावसहि ’ गुरु कहे – ‘ तहत्ति ’। सब जणे खमा० देकर ‘इच्छा० संदि० भग० ! मुहपत्ति पडिलेहुं ? ’ इच्छं, कहकर मुहपत्ति पडिलेहकर वांदणे देवे, फिर खमा० देकर ‘ इच्छा० संदि० भग० ! छम्मासिय कप्प संदिसाउं ?’ इच्छं इच्छामि खमा० ‘ इच्छा० संदि० भग० ! छम्मासिय कप्प पाडिग्गहुं ? ’ इच्छं इच्छामि खमा० ‘ इच्छा० संदि० भग०! सज्झाय उक्खिवणऽत्थं मुहपत्ति पडिलेहुं ?, इच्छं’ कह कर मुहपत्ति पडिलेह कर वांदणे देवे, खमा० देकर कहे– ‘ इच्छा० संदि० भग० ! सज्झाय उक्खिवुं ? ’ गुरु कहे– ‘ उक्खिवह ’। ‘ इच्छं ’ कहके फिर खमा० देकर कहे – ‘ इच्छा० संदि० भग० ! सज्झाय उक्खिवणऽत्थं काउसग्ग करूं ? ’ गुरु कहे ‘ करेह ’। वाद ‘ इच्छं सज्झाय उक्खिवणऽत्थं करेमि काउसग्गं, अन्नत्थ० कहकर १ नवकार अथवा १ लोगस्सका * काउस्सग्ग करे, पारकर प्रगट १ नवकार अथवा १ लोगस्स कहे, खमा० देकर ‘ इच्छा० संदि० भग० ! असज्झाइय अणाउत्त ओहडावणऽत्थं काउसग्गकरुं ? ’ इच्छं असज्झाइय अणाउत्त ओहडावणऽत्थं करेमि काउस्सग्गं, अन्नत्थ० कहके

* यदि काउस्सग्ग नवकार का करे तो पारके नवकार प्रगट कहे और लोगस्सका काउस्सग्ग करे तो पारके प्रगट लोगस्स कहे.

४ लोगस्सका काउस्सग्ग करे, पारके प्रगट लोगस्स कहे । फिर खमा० देकर इसी तरह 'खुद्दोवद्दव ओहडावणऽत्थ' काउस्सग्ग ४ लोग्गस्स का करे, पारकर प्रगट लोगस्स कहे । फिर खमा० देकर 'इच्छा० सदि० भग० ! सक्काइ वेयावच्चगर आराहणऽत्थ काउसग्ग करूं ?, इच्छ सक्काइ वेयावच्चगर आराहणऽत्थ करेमि काउस्सग्गं अन्नत्थ०' कहकर ४ लोगस्सका काउसग्ग करे, पार कर प्रगट लोगस्स कहे, खमा ० देकर इच्छा० सदि० भग० ! सज्झाय संदिसाउं' ? इच्छ इच्छामि खमा० 'इच्छा० संदि० भग० ! सज्झाय करुं ?, इच्छ' कहकर गोडोंसे वैठकर १ नवकार तथा दशवैकालिक के "धम्मो मगल" आदि तीन अध्ययन कहकर ऊपर एक नवकार गिणे, खमा० देके अविधि आशातना खमावे ।

२० लोच करने व कराने का विधिः—

गुरु के आगे इरियावही पडिक्कमकर खमा० देकर 'इच्छा० सदि० भग० ! लोच मुहपत्ति पडिलेहुं ?' इच्छ, कहकर मुहपत्ति पडिलेहे और वांदणे देवे, खमा० देकर कहे— 'इच्छा० संदि० भग० ! लोच संदिसाउ ?' गुरु कहे— 'सदिसावेह'। 'इच्छ इच्छामि खमा०' देकर कहे— 'इच्छा ० सदि० भग० ! लोच कराउ ?'

(१)— खुद अपने हाथसेही यदि लोच करे ? तो 'करू !' कहे और गुरुभी उत्तरमें 'करेह अणुन्नाय मए' कहे ।

गुरु कहे– ' करावेह अणुन्नायं मए '। बाद ' इच्छं ' कहकर खमा० देवे।

लोच करने वाला कराने वाले से यदि छोटा हो ? तो लोच करने वाला कराने वाले के आगे खमा० देकर कहे– 'इच्छा० संदि० भग० ! उच्चासण संदिसाउं ?, इच्छं इच्छामि खमा०, इच्छा० संदि० भग० ! उच्चासण ठाउं ?, इच्छं' कहकर खमा० देवे। लोच कराने वाला करने वाले से यदि छोटा होवे ? तो लोच कराने वाला करने वाले के आगे खमा० देकर कहे– ' इच्छकारी भगवन् लोयं करेह '। ' इच्छं ' कहके खमा० देवे।

जिस दिन बुध, गुरु, शुक्र, या सोमवार होवे ? तथा पुनर्वसु, पुष्य, रेवती, चित्रा, श्रवण, धनिष्ठा, मृगशिरा, अश्विनि, हस्त, इनमेंसे कोई भी नक्षत्र होवे ? अथवा कृत्तिका, विशाखा, मघा और भरणी इन चार [४] नक्षत्रों को छोडकर चाहे जो नक्षत्र होवे ? उस दिन लोच कराना, योगिनी [जोगिणी] को पूंठ में अथवा दाबी बाजु रखकर लोच कराने बैठना। एकम और नवमी को पूर्वमें, तीज और इग्यारस को अग्नि कोणमें, पाँचम और तेरसको दक्षिणमें, चौथ और बारस को नैऋत्य कोणमें, छठ और चउदसको पश्चिममें, सातम और पूनमको वायव्य कोणमें, दूज और दशमीको उत्तर में, आठम और

(१)—लोच करानेवाले को पाटले उपर बैठाके लोच करने की प्रथा पहले थी इस वास्ते विधिप्रपा में ये दो आदेश लोच कराने वाले के लिये लिखे हैं, परंतु आज कल की प्रथासे लोच करने वाला पाटले उपर बैठता है, इस वास्ते लोच करने वाले को ये दो आदेश लेने चाहिये।

अमावसको ईशान कोणमें योगिनी रहती है। लोच करा चुके बाद लोच करने वाले के हाथ दबावे और स्थापनाचार्य के आगे इरियावही पडिक्कमे, खमा० देकर 'इच्छा० सदि० भग० ! चैत्यवदन करू ?' इच्छं, कहकर "जयउ सामिय" चैत्यवंदन तथा जकिंचि० नमुत्थुणं० जावंति चेइयाइं० जावत केवि साहू० नमोऽर्हत्० उवसग्ग हर० तथा जय वीयराय०। कहकर गुरुके पास आकर मुहपत्ति पडिलेहकर दो वांदणे देवे और आगे लिखे मुजब सात खमासमणे देवे—

१– खमा० देकर कहे–' इच्छा० सदि० भग० ! लोच पवेउं ?' गुरु कहे– 'पवेयह'।

२– इच्छं इच्छामि खमा० देकर कहे– 'संदिसह किंभणामो ?' गुरु कहे– 'वदित्ता पवेयह'।

३– इच्छं इच्छामि खमा० देकर कहे– ' केसा मे पज्जुवासिया ' गुरु कहे ' दुक्करं कयं , इंगिणी साहिया ' बाद ' इच्छामो अणुसट्ठि ' कहे।

४– खमा० देकर कहे– ' तुह्माणं पवेइयं संदिसह साहूणं पवेएमि ' गुरु कहे– ' पवेयह '।

५– इच्छ इच्छामि खमा० देकर तीन नवकार गिणे ।

६– खमा० देकर कहे– 'तुम्हाणं पवेइयं, साहूणं पवेइयं, संदिसह काउसग्गं करेमि' गुरु कहे– 'करेह'।

७– इच्छं इच्छामि खमा० देकर 'केसेसु पज्जुवासिज्जमाणेसु सम्मं जन्न अहियासिअं कुइअं कक्कराइअं छिअं, जंभाइअं तस्स ओहडावणिअं करेमि काउस्सग्गं' अन्नत्थ० कहकर "सागरवरगंभीरा" तक १ लोगस्स का काउस्सग्ग करे, पारकर प्रगट लोगस्स कहे, बाद गुरु को तथा सबी बडे साधुओं को वंदना करे।

अपने हाथ से ही यदि लोच करे? तो लोच कर चुके बाद इरियावही पडिक्कम कर "जयउ सामिय" चैत्यंवदन कहकर जंकिंचि० नमुत्थुणं० आदि कहते हुए जय वीयराय०! तक कहे। बाद गुरु आदि सबी बडे साधुओंको वंदना करे, बाकी मुहपत्ति पडिलेहण तथा सात खमासमणे देने आदि क्रिया न करे॥

२२ पंचशक्रस्तव देव वंदन विधिः—

पहले दोनों गोडे भूमि उपर लगा कर बैठा हुआ योगमुद्रा (१) से नमुत्थुण (२) कहे; बाद इरियावही

(१)–दोनों खुणी पेटउपर लगाके अंगुलियों के बीचमें अंगुलियां डालकर दोनों हाथ जोडना और पद्म (कमलफूल) के आकार से हाथों को रखना उसका नाम योगमुद्रा है। (२) – चैत्यवंदन बृहद्भाष्य में लिखा है कि– "खमा० देकर 'इच्छा० संदि० भग०! चैत्यवंदन करूं,? इच्छं' कहकर चैत्यवंदन कहे बाद नमुत्थुणं कहे"।

पडिक्कमकर खमा० देकर ' इच्छा० सदि० भग० ! चैत्यवंदन करूं ?, इच्छं ' कहकर चैत्यवंदन कहे और जकिंचि० तथा नमुत्थुणं० अरिहत चेइयाणं० आदि कहकर पडिक्कमणे की तरह चार थुइसे देववंदन करे, फिर नमुथुणं० तथा अरिहंत चेइयाणं० आदि कहकर चार थुइसे देववंदन करे, बाद नमुत्थुण० जावंति चेइयाइं (१) जावत केविसाहू० नमोऽर्हत्० कहकर स्तवन कहे, बाद जय वीयराय० ! कहकर फिर नमुत्थुणं कहकर खमा० देकर अविधिआशातना खमावे ॥

२२ –मडली–रचना–विधिः—

पूर्व या उत्तर दिशा के सामने मुख करके मंडलीबद्ध बैठकर पडिक्कमणा वगेरह करना चाहिये, मंडलीकी रचना श्रीवत्स के आकारकी होती है–

"आयरिया इह पुरओ, दो पच्छा तिन्नि तयणु दो तत्तो। तेहिं पि पुणो इक्को, नव गणमाणा इमा रयणा॥ १ ॥

(१) "खमा० देकर जावत केविसाहू० नमोऽर्हत्० कहकर स्तवन कहे, बाद फिर नमुत्थुण आदि जय वीयराय ! तक कहे" यहभी चैत्यवंदन बृहद्भाष्य में लिखा है।

अर्थ—इस मंडली रचनामें आगे आचार्य बैठें, उनके पीछे दो जणे, दो के पीछे तीन जणे, तीनके पीछे दो जणे और दोके पीछे एक जणा बैठे, यह मंडली रचना नव साधुओं के समुदायकी है। सूत्रकी वाचना लेते समय १, सूत्रके अर्थकी वाचना लेते समय २, भोजन करते वखत ३, कालग्रहण लेने में ४, आवश्यक (पडिक्कमणा) करते समय ५, सज्झाय पठवते या करते वखत ६, तथा संथारा पोरिसी भणानेके समय ७, इस रीतिसे मंडली– रचना करनी चाहिये । ०ᵒ8ᵒ०

सूचना:— पर्यंत आराधना विधि, महापारिट्ठावणिया विधि, अंतिम देववंदन विधि और श्रावक कर्तव्य इनका संग्रह " साधु साध्वी आराधना विधि तथा अंतक्रिया विधि " नामक प्रकरण अलग छपा है, उसको श्रीमती पुण्यश्रीजी स्मारक ग्रन्थमाला ठि:— इमली वाली जैन धर्मशाला– कुन्दीगर भैंरो जी की गली मु:— जयपुर से मंगवा लेना.

॥ इति साधु-साध्वी योग्य आवश्यकीय विधि संग्रहः समाप्तः ॥

आवश्यकीय-विचार संग्रहः

१-काउस्सग्ग-दोष-विचार—

काउस्सग्ग के उगणीस (१९) दोष इस मुजब हैं-घोडेकी तरह आगे पीछे पैर रखकर खडा रहे वह 'घोटक' दोष १, पवन (वायरे)से हिलती हुइ लता (वेलडी) की तरह शरीर हिलावे वह 'लता' दोष २, थभेके या भींतके सहारे से (ओठा लेकर) खडा रहे वह 'स्तंभ कुड्य' दोष ३, उपर छत वगैरह के मस्तक अडाकर खडा रहे वह 'माल' दोष ४, जैसे कपडे रहित शबरि (भीलडी) दोनो हाथो से अपने लज्जनीय अंगको ढांकती है वैसे गुह्य (नाभि से नीचेके) स्थान पर हाथ रखकर खडा रहे वह 'शबरि' दोष ५, कुलवान स्त्री की तरह मस्तक को अत्यंत नीचा नमा कर खडा रहे वह 'वधू' दोष (१) ६, दोनों पैर चौडे रखकर या तो भेले करके खडा रहे वह 'निगड' दोष ७, नाभिसे उपर और गोडो से नीचा चोल-

१—पगों के अगूठे का अगला भाग देखसके वैसे नाक उपर नजर लगाकर काउस्सग्ग में खडा रहे।

पट्टा पहर कर खडा रहे वह 'लंबोत्तर' दोष ८, स्तनोंको चोलपट्टेसे ढांक दे. यानि स्तनों से उपर चोल-
पट्टा पहिरकर खडा रहे वह 'स्तन' दोष ९, गाडीकी ऊधीके मुताबिक पगकी दोनों एडियां मिलाकर
अँगूठे जुदे जुदे रखकर अथवा दोनों अँगूठे मिलाकर एडियां जुदि जुदि रखकर खडा रहे वह 'शकटोर्ध्वि
का' दोष १०, साध्वीकी तरह दोनों खंधोंके उपर कपडा ओढकर खडा रहे वह 'संयति' दोष ११,
लगामकी तरह ओघा आगे रखकर खडा रहे अथवा लगाम सहित घोडेकी तरह शिर (मस्तक) ऊंचा
नीचा करे वह 'खलिन' दोष १२, कागडे की तरह आंख इधर उधर हिलावे वह 'वायस' दोष १३, जूं
आदिके भयसे कोठके फलकी तरह गोल आकारसे शरीर के कपडे लपेट कर जंघा आदिके बीच में दबाकर खडा
रहे वह 'कपित्थ' दोष १४, भूत लगे हुए मनुष्यकी तरह शिर घूमाता हुआ खडा रहे वह 'शीर्षोत्कंपित'
दोष १५, दूसरे को किसी कामकी मना करनेके लिये मूंगेकी तरह 'हुं हुं' ऐसा शब्द करे वह 'मूक' दोष १६,
लोगस्स अथवा नवकारकी गिणतीके लिये अंगुलि अथवा भ्रु (भोंपण) हिलावे वह 'अंगुलिका-भ्रु' दोष
१७, भट्ठी उपर पकते हुए शराब की तरह 'बुड बुड' शब्द करे अथवा शराब पीये हुए मनुष्यकी तरह

इधर उधर घूमता हुआ खडा रहे वह 'वारुणी' दोष १८, नवकार आदि चिंतवता हुआ बंदरकी तरह होठ फरकावे वह 'प्रेक्षा' दोष १९ है, इन उगणीस दोषो में से कोइभी दोष काउस्सग्ग में नहीं लगाना चाहिये ।

२—वांदणे देनेका विचार—

आसनके पिछले भाग पर खडे रहकर आधे नमे हुए 'इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए अणुजाणह मे मिउग्गह' इतना कहकर 'निसीहि' कहते हुए आसनके अगले भागमे आकर संडासे पूजता हुआ जीमणे पगतरफ ओघेकी दंडी रखकर खडे पगोंसे बैठे, बाद डावे गोडे ऊपर मुहपत्ति रखकर ओघेकी दशियो के उपर गुरुके दोनों चरणोकी कल्पना करे, बादमे हाथ जोड कर 'अहो' का 'अ' धीरे से बोलते हुए जोड़े हुए दोनों हाथ ओघेकी दशिओ पर लगाकर जोरसे 'हो' बोलते हुए दोनों हाथ अपने ललाट (निलाड) के लगावे, यह एक आवर्त हुआ, इसी प्रकार दूसरे और तीसरे आवर्तमें भी 'काय' तथा 'काय' का 'का' धीरेसे बोलते हुए दोनों हाथ ओघेकी दशिओ पर लगाकर 'यं' तथा 'य' ऊंचे स्वरसे बोलते हुए अपने ललाट को लगावे, बाद हाथ जोड़े हुए गुरुके मुखपर नजर लगाकर 'खमणिज्जो भे किलामो

अप्पकिलंताणं बहुसुभेण भे दिवसो (१) वइक्कंतो' इतने तक कहे, बाद 'जत्ता भे' का 'ज' धीरे स्वरसे बोलते हुए दोनों हाथ ओघेकी दशिओं पर लगाकर अपने ललाट की तरफ हाथ लेजाते हुए बीचमें मध्यम (नहीं धीरा और नहीं ऊंचा, ऐसे) स्वरसे 'ता' बोलकर 'भे' ऊंचे स्वरसे बोलते हुए दोनों हाथ ललाटके लगावे, यह चौथा आवर्त हुआ, इसी तरह पांच में और छट्ठे आवर्त में भी 'जवणि' और 'जं च भे' का 'ज' तथा 'ज' धीरे स्वरसे बोलते हुए ओघेकी दशिओंके हाथ लगाकर अपने ललाट की तरफ हाथ लेजाते हुए बीचमें 'व' तथा 'च' मध्यम स्वरसे बोलकर 'णि' तथा 'भे' ऊंचे स्वरसे बोलते हुए दोनों हाथ अपने ललाटके लगावे, बाद 'खामेमि खमासमणो देवसियं (२) वइक्कमं' कहकर खडा होजावे और आसनके पिछली तरफ जाकर खडा हुआही 'अवस्सियाए पडिक्कमामि खमासमणाणं देवसिआए (३) आसायणाए' से लगाकर 'वोसिरामि' तक संपूर्ण सूत्र कहे। फिर दूसरी वार 'इच्छामि खमा-

(१)—राइमें 'राइवइक्कंता' पक्खीमें 'पक्खो वइक्कंतो' 'चौमासीमें चोमासी वइक्कंता' संवच्छरीमें 'संवच्छरो वइक्कंतो' कहे।
(२)—राइमें- 'राइयं' पक्खीमें 'पक्खियं' चौमासी में 'चोमासीयं' और संवच्छरीमें 'संवच्छरीयं' कहना।
(३)—राइमें 'राइयाए' पक्खीमें 'पाक्खियाए' चौमासीमें 'चोमासियाए' और संवच्छरीमें 'संवच्छरियाए' कहना।

समणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए अणुजाणह मे मिउग्गहं' तक कहते हुए आसन के आगेकी तरफ आकर 'निसीहि' वोलते हुए संडासे पूंज कर वैठके पहलेकी तरह ही सव विधि करते हुए संपूर्ण सूत्र कहे, परंतु खड़े होकर आसनके पिछली तरफ न जावे, उसी जगह खडा रहे और 'आवस्सियाए' यह पद न कहे।

३—छम्मासी तप चिंतन-विचार—

काउस्सग में रहा हुआ विचार करे कि—जैसे भगवान् श्रीमहावीर स्वामीने छ महीने के उपवास किये थे वेसे हे जीव ! तूं भी क्या करसकता है ?, नहीं, यदि पूरे छ महीने के उपवास नहीं कर सकता है तो क्या एक दिन कम छ महीने करसकता है ?, नहीं, इसी तरह २ दिन कम ३ दिन कम यावत् २९ दिन कम छ महीने कर सकता है ?, नहीं, यदि इतने दिनतक उपवास नहीं कर सकता है तो क्या पांच महीने करसकता है ?, नहीं, इसी तरह अपने जीवको पूछते जाना और जो न करसके उसका अपने आप मनही से मना करते जाना, ऐसे एक एक दिन कमती करते हुए ४ महीने, ३ महीने, २ महीने, यावत् एक महीने तक विचार करलेना, वाद एक महीने में भी एक एक दिन कमती करते हुए १३ दिन कमती करदेना अर्थात्

अपने आत्माको पूछे कि– १३ दिन कम एक महीना यानि १७ उपवास तू करसकता है?, नहीं, यदि इतना भी नहीं कर सकता है तो क्या चौतीस भक्त (१६ उपवास) करसकता है?, नहीं, इसी प्रकार बत्तीस भक्त (१५ उ०), तीस भक्त (१४ उ०), अट्ठाइस भक्त (१३ उ०), छव्वीस भक्त (१२ उ०), चौवीस भक्त (११ उ०), बाईस भक्त (१० उ०), वीस भक्त (९ उ०), अट्ठारे भक्त–अट्ठाही (८ उ०), सोले भक्त (७ उ०), चौदह भक्त (६ उ०), बारे भक्त (५ उ०), दशम भक्त (४ उ०), अट्ठम (३ उ०) छट्ठ (२ उ०), चउत्थ भक्त (१ उ०), आयंबिल–निवी–एकलठाणा–एकासणा–बियासणा–अवऽड्ढ–पुरिमऽड्ढ –साढपोरिसी–पोरिसी–नमुक्कारसहि करसकता है ?, इसी तरह अपने जीवको पूछकर शक्ति मुजब जो पच्चक्खाण करना हो वह मनमें धारकर काउस्सग्ग पारलेवे ।

इस छम्मासी तपचिंतनके विचारमें यह खयाल रखना कि–जो पच्चक्खाण अपने से न बन सके उसके लिये तो यह उत्तर विचारना कि–" यह पच्चक्खाण मेरेसे नहीं बन सकता " । और जो पच्चक्खाण कर तो सकता है परन्तु उस दिन वह पच्चक्खाण करनेका भाव न हो तो ऐसा विचारना कि–" यह पच्चक्खाण

कर तो सकता हूं परन्तु आज भाव नहीं है"। और जो करने की इच्छा हो उसके वास्ते यह विचारना कि–"अमुक पच्चक्खाण करने की मेरी इच्छा है"।

४—सिज्झातर–विचार—

साधु या साध्वी जिस मकानमें उतरे उस मकानका स्वामी सिज्झातर कहाता है, घर धणीने यदि किसी दूसरेको भाडे देदिया हो अथवा किसी कारणसे दूसरेके नामपर चढा दिया हो तो भाडे वालेका अथवा जिसके नामपर चढाया हो उसका घर सिज्झातर करना चाहिये। रातमे संथारा पोरिसी भणाकर निद्रा (उंघ) लेनेके बाद तथा राइ पडिक्कमणा करनेके बाद सिज्झातर होता है सो उस मकानको छोडकर जिस वक्त विहार करे ? दूसरे दिनके उस वक्त तक चारो प्रकारका आहार ओघा–चद्दरादिक कपडे–पात्रे–कंबल आदि चीजे सिज्झातर के घरसे न लेनी, परन्तु राख-कुडी-घास-पाट पाटले अथवा लेप करने की कोइ चीज चाहिये तो सिज्झातरके घरसे भी ले सकते हैं।

यदि एक मकानमें निद्रा लेवे और राइ पडिक्कमणा किसी दूसरे मकानमे जाकर करे ? तो दोनों

मकान वाले सिज्जातर होते हैं। एक समुदाय के ही साधु या साध्वी अधिकहों और मकान उतरनेका छोटाहो जिस से दो चार मकानों में जुदे जुदे ठहरे हों तो गुरु या गुरुणीने जिसमें निद्रा ली हो तथा राइ पडिक्कमणा किया हो उसी मकानका मालिक सिज्जातर होता है अन्य नहीं होता। यदि कोइ भूलसे सिज्जातरके घरका आहार पाणी आदि लाकर खावे पीवे अथवा वापरे तो उसको एक (१) उपवास की आलोयणा आवे।

५—आहार-दोष-विचार—

गृहस्थ के घर गौचरी लेते हुए ४२ बेतालीस दोष और उपासरे में आकर आहार करते हुए मंडली के पांच दोष सब मिलकर ४७ दोष साधु साध्वियों को त्यागने चाहियें, वे इस मुजब हैं—

"सोलस उग्गम दोसा, सोलस उप्पायणाए दोसा य। दस एसणाए दोसा, गासेसण मिलिय सगयाला १"

अर्थ— उद्गमनके १६ दोष जो कि आहार (रसोइ) बनाते हुए केवल गृहस्थोंसेही लगते हैं, उत्पा— दन के १६ दोष. जो गौचरी जाते हुए साधु—साध्वियोंसे ही लगते हैं, ग्रहणैषणा नाम ग्रहण करते

(१) "सिज्जातरपिंडे आं० मयंतरे पु०" विधिप्रपा। "शय्यातरीयपिंडस्य सादने धर्म (उप०) मादिशेत्" आचार दिनकर पत्र २५२।

(वहोरते) हुए आहारके शुद्धताकी तलाशी करना उसके १० दोष, जों गृहस्थ तथा साधु. दोनोंसे लगतेहैं, और ग्रासैषणा (मंडली) के ५ दोष, जो आहार–पाणी करते समय लगतेहैं, इस प्रकार सब मिलकर ४७ दोष आहार संबंधी होतेहैं । इनमेंसे पहले उद्गम के १६ दोष बतातेहैं—

"आहाकम्मुद्देसिय, पूईकम्मे य मीसजाए य । ठवणा पाहुडियाए, पाओयर कीअ पामिच्चे ॥ २ ॥"

"परिअट्टिए अभिहडु,-ब्भिन्ने मालोहडे य अच्छिज्जे । अणिसिट्ठंऽज्झोयए, सोलसपिंडुग्गमे दोसा ॥ ३ ॥"

अर्थः— साधु या साध्वी के वास्ते सचित्त वस्तुको अचित्त करे, अथवा अचित्त वस्तुको साधुके निमित्त रांधकर तय्यार करना वह 'आधाकर्म' दोष १, गृहस्थने अपने वास्ते बनाए हुए आहारको साधु के वास्ते दही–गुड (गोल–सकर) आदिके मिलानसे अथवा फिरसे दूसरी वार छमका–वघार आदि देकर स्वादिष्ट बनाना वह 'उद्देशिक' दोष २, आधाकर्म आदि दोष रहित शुद्धमान आहारमें किंचित् मात्रभी आधाकर्मी आहार मिलाकर वहरावे, अथवा शुद्धमान आहार भी आधाकर्मी आहारसे खरडी हुई

कुछि आदिसे वहरावे वह ‘ पूतिकर्म ’ दोष ३, शुरुसे ही साधु और गृहस्थ दोनोंके वास्ते जो आहार बनावे वह ‘ मिश्रजात ’ दोष ४, साधुको वहराने की अभिलाषासे जो आहार अपने बरतनमेंसे थोडी या ज्यादा देरतक जुदा स्थापन करके रखे वह ‘ स्थापना ’ दोष ५, अपने पुत्रादिकके विवाह आदिमें बने हुए उत्तम आहारादिक साधुको बहरानेसे विशेष लाभ होनेकी अभिलाषासे विवाह आदि उत्सव आगे पीछे करे, अर्थात् गाममें जिस समय साधुका योग होवे उस समय विवाह आदि करे और उस विवाह आदि उत्सव संबंधी आहारादि साधुको बहरावे वह ‘ प्राभृतिका ’ दोष ६, अंधेरे में रही हुई वस्तु दीवे आदिसे शोधकर लाके बहरावे, अथवा अंधेरेमें साधु बहरते नहींहैं इससे प्रकाश होनेके वास्ते भींत तोडाकर बारी वगैरह करावे, अथवा अंधेरे में बनाया हुआ आहार साधुको बहरानेके वास्ते प्रकाशमें लाकर रखे वह ‘ प्रादुष्करण ’ दोष ७, साधुके वास्ते वेचाती लाकर बहरावे वह ‘ क्रीत ’ दोष ८, साधु के वास्ते उधारा लाकर बहरावे वह ‘ प्रामित्य ’ दोष ९, अपनी वस्तु दूसरेको देकर बदलेमें दूसरेकी वस्तु लाकर साधुको वहरावे वह ‘ परावर्तित ’ दोष १०, अपने घरसे अथवा अन्य गामसे साधुके सामने

लाकर वहरावे वह 'अभ्याहृत' दोष ११, घृतादिकके कूडले आदिके मुखपर लगी हुई मट्टी वगैरह उखेड कर वहरावे, अथवा जो हमेशां नहीं खोले जाते वैसे मजबूत बंध किये हुए कमाड खोलकर बहरावे वह 'उद्भिन्न' दोष १२, जिसके पगथिये न हों वैसी मेडी उपरसे उतार कर वहरावे, अथवा भूमिघरमें से निकाल कर और दोनों एडियां ऊंची करके अगूठों पर खडे रहकर अथवा पाटला वगैरह लगाकर जिस मेसे चीज उतारसके वैसे शिक्के उपरसे उतार कर अथवा वडी पेटी तथा कोठे आदिमेंसे बाहर निकाल कर और जहां पर नजर न पहुचे तथा जहां रही हुई चीज भी बडी मुश्किलसे लेसके वैसे ऊचे आले अथवा वारीमेंसे लेकर वहरावे वह 'मालापहृत' दोष १३, मालिककी इच्छा विना दूसरा (गाम आदिका स्वामी–घरका मालिक तथा चोर आदि) कोई जवरदस्तिसे खोसकर वहरावे वह 'आच्छेद्य' दोष १४, जिसके वहुत मालिक हों अथवा एक मालिकने अपने वहुत नोकर–चाकरोंके वास्ते खेत आदिमें जो आहार भेजा हो अथवा जो हाथीके लिये वनाया हो वैसा आहार सव मालिकोंकी इच्छा विना और उनकी गेर हाजरीमें वैसेही सव नोकर चाकरोंकी तथा महावत और हाथीके मालिक राजा आदिकी

रजा बिना यदि कोई अकेला अथवा अन्य आदमी साधुको बहरावे तो वह 'अनिसृष्ट' दोष १५, अपने घर निमित्त रसोई करना शुरु कर देनेके बाद गाममें साधुओंके आनेकी खबर मिलने पर अपने वास्ते रंधाते हुए अन्नमें साधुके निमित्तसे दूसरा अन्न मिला कर अधिक रसोई करे वह 'अध्यवपूरक' दोष १६, ये उद्गमके १६ दोष हैं, जो कि आहार बनाते हुए गृहस्थोंसे ही लगते हैं, इन से बचनेके वास्ते गोचरी जाने वाले साधु—साध्विओंको चाहिये कि—वे आहार लेते समय पूरी सावधानी रखें, गृहस्थोंके इंगित, आकार तथा चेष्टा वगैरहसे जिस आहारमें किसीभी दोषकी संभावना हो वह आहार न लेवें ॥

अब केवल साधुसे लगने वाले उत्पादनाके १६ दोष बताते हैं:—

"धाई दूइ निमित्ते, आजीव वणीवगे तिगिच्छा य। कोहे माणे माया, लोभे य हवंति दस एए ॥ ४ ॥"

"पुव्विं पच्छा संथव, विज्जा मंते य चूण्ण जोगे य। उप्पायणाइ दोसा, सोलसमे मूलकम्मे य ॥ ५ ॥"

अर्थः— बालकको धवाने (धवराने) वाली, स्नानादि कराने वाली, अलंकार (दागिना) पहराने वाली, रमाने वाली और उपाडने (तेडने) वाली ये पांच प्रकार की धात्री (धामाता) कहाती हैं, इनमें

से कोइभी काम खुद करके अथवा दूसरेसे कराके गृहस्थको खुश करता हुआ गौचरी लेवे वह ' धात्रीपिंड ' दोष १, एक दूसरेकी कही हुई बात एक दूसरेके पास जाकर परस्परमें कहने वाली दूती कहातीहै, ऐसे दूतीपणा करके जो गौचरी लेवे वह ' दूतीपिंड ' दोष २, शुभ अशुभ चेष्टा तथा ज्योतिष आदि आठ प्रकारके निमित्तसे भूत–भविष्यत्–वर्तमान कालमें होने वाले सुख–दु.ख–लाभ–अलाभ–जीवित–मृत्यु आदि बताना वह निमित्त कहाता है, इस तरह करके जो गौचरी लेवे वह ' निमित्तपिंड ' दोष ३, साधु साध्वी गृहस्थके जाति–कुल–गण–(१) कला और व्यापार की प्रशंसा करते हुए मोगम पणेसे अपनेको उस गृहस्थके तुल्य जाति कुलादि वाला बताकर, अथवा ' मैं अमुक जाति या कुलका हू ' ऐसे साफ साफ कहकर जो गौचरी लेवे वह ' आजीवपिंड ' दोष ४, ब्राह्मण आदिके भक्तोके आगे उनके माने हुए गुरु ब्राह्मण आदिकी प्रशसा करके ओर ' मैं भी उनका ही भक्त हूं ' ऐसा बताकर जो गौचरी लेवे वह ' वनीपक पिंड ' दोष ५, खुद अपने आप किसी रोगी को दवाई देकर, अथवा दूसरेसे दिलाकर अथवा

(१) "मल्लसारस्वतादिर्गणो लोक प्रतीत " इति पिंडविशुद्ध्यवचूरि ।

दवाई या वैद्यक बताकर जो गौचरी लेवे वह 'चिकित्सा पिंड' दोष ६, आहार न मिलनेसे क्रोधमें आकर प्रयुक्त किये हुए मारण—उच्चाटन आदि विद्या चमत्कारको देखाकर अथवा साप देना आदिसे डरे हुए गृहस्थसे जो आहार लेवे वह 'क्रोधपिंड' दोष ७, दूसरे साधुओंके चढानेसे अथवा अपमान करनेसे या अपनी लब्धिकी प्रशंसा सुनकर अभिमानमें आया हुआ 'तुम देखो तो सही मैं अमुकके घरसे अमुक आहार अभी लाकर तुमको देता हूं' इस तरह प्रातिज्ञा पूर्वक बोलता हुआ गृहस्थके घर जाकर अनेक तरहके चाटु वचनों से उस गृहस्थको अभिमानमें चढाकर, अथवा धमकाकर फैल फितूर करके, स्त्री आदि शेष परिवारवालों की इच्छा विना घरके मालिकसे जो गौचरी लेवे वह 'मानपिंड' दोष ८, माया (कपट) से नवे नवे वेष करके और नवी नवी भाषा बोलनेसे गृहस्थको खुश करके, अथवा विद्याके जोरसे जुदे जुदे रूप बना कर जो आहार लेवे वह 'मायापिंड' दोष ९, अधिक लोभसे बहुत घरोंमें फिर फिरकर अच्छा स्वादिष्ट आहार लावे अथवा गौचरी फिरते हुए किसीके घरपर अच्छा आहार मिलने पर बहुत ज्यादा लेलेवे वह 'लोभ पिंड' दोष १०, आहार लेनेके पहले देने वालेकी प्रशंसा करे वह 'पूर्वसंस्तव' दोष और

आहार लेनेके पीछे देने वालेकी प्रशंसा करे वह 'पश्चात्संस्तव' दोष कहाता है, अथवा देने वालेकी और अपनी अवस्था मुजव उसके साथ अपना संवध घड़ लेवे, जैसे कि–देने वाले स्त्री या पुरुष की अवस्था अपनेसे अधिक होवे तो तुम्हारे जैसे मेरे माता या पिता थे, इसी तरह यदि समान अवस्था हो तो बहिन या भाई का और यदि छोटी अवस्था हो तो पुत्री या पुत्र का सवध कह वतावे वह 'पूर्वसंस्तव' दोष, और इसी मुजव अपने से वड़े (मोटे) के साथ जो सासु या ससुरे आदिका संवंध कहे वह 'पश्चात्संस्तव' दोष कहाता है ११, गृहस्थ को विद्या (१) अथवा मत्रसे (२) मत्रित करदेवे बाद उसके पाससे गौचरी लेवे अथवा विद्या तथा मत्रके चमत्कार वताकर जो गौचरी लेवे वह अनुक्रमसे 'विद्यापिड' दोष १२, और 'मत्रपिड' दोष कहाताहै १३, अदृश्य होना आदि जिससे होसके वैसा चूर्ण (अंजन–सुरमा) आदि अपने नेत्रोंमें आज कर लोगोंको खुश करके, अथवा ऐसा चूर्ण वनानेकी रीति दूसरोंको वता

---

(१)–जिसकी अधिष्ठायिका देवी हो और जाप होम आदि क्रिया करनेसे सिद्ध होवे वह विद्या कहातीहै। (२)–जिसके अधिष्ठायक पुरुष रूपवाले देवता हो और जाप होम आदि क्रिया किये विना पाठ मात्रसे जो सिद्ध होवे वह मत्र कहाता है।

कर जो गौचरी लेवे वह 'चूर्ण पिंड' दोष १४, दो चार अथवा दश वीस चीजें भेली मिला कर सौभाग्य दौर्भाग्य आदि करने वाला पग आदिमें लगानेका लेप आदि बनाना उसको योग कहते हैं, ऐसी योगवाली चीजों का लेप पग आदिके करके जमीन की तरह पानी उपर चलना आदि चमत्कार बताकर अथवा 'अमुक अमुक चीजें भेली करके पानी आदिके साथ खाने–पीने से अमुक नफा या नुकसान होता हैं' इत्यादि बताके गौचरी लेवे वह 'योग पिंड' दोष १५, विद्या–मंत्र तथा औषधी आदिके बलसे गर्भधारण–गर्भपात अथवा गर्भस्तंभन करके नपुंसक को पुरुषादिक और पुरुष आदिक को नपुंसक आदि बनाके जो गौचरी लेवे वह 'मूल कर्म पिंड' दोष १६, ये १६ दोष उत्पादना के और पहले कहे हुए उद्गम के १६ दोष मिला कर ३२ दोष गवेषण एषणा के नाम से कहाते हैं, 'गौचरीमें ही ये दोष टालने के हैं' ऐसा नहीं है, किन्तु कपड़े पात्रे आदिमें भी टालने चाहिये ।

अब साधु और गृहस्थ दोनोंसे लगने वाले ग्रहण एषणाके १० दोष बताते हैं:—

"संकिअ मक्खिय निक्खित्त,-पिहिय साहरिय दायगुमीसे । अपरिणय लित्त छड्डिय एसण दोसा दस हवंति ६"

अर्थ— गृहस्थके घरपर रसोइ आदि अधिक देखकर उस आहारमें आधाकर्म—उद्देशिक आदि किसी दोषकी शंका होने परभी पूछ ताछ करके शुद्धताका निश्चय किये विना वहरलेवे, इसीतरह उपासरेमें आये बाद आहार करते समय दूसरे साधुके गोचरीमें आयाहुआ अपने समान आहार देखकर दिलमें आधाकर्म आदि दोषकी शंका होते हुएभी निश्चय किये विना जो आहार खावे वह ' शंकित ' दोष १, जो बरतन अथवा कुर्छी आदि सूखी अथवा भींजीहुई मट्टीसे खरडे हुए हो तथा जिसमें सचित्त पाणीके छांटे लगे हो तथा जो सचित्त पाणीसे भीजे हुए हो और जिसमें कापकूप किये हुए आंबे आदि वनस्पतिके छोटे छोटे टुकडे लगे हों वैसे वरतन वा कुर्छी या हाथोसे गृहस्थ वहरावे और साधु लेवे वह ' मृक्षित ' दोष कहाताहै, और वहरानेके पहले हाथ तथा बरतन धोकर अथवा मांजकर वहरावे वह ' पूर्वकर्म ' दोष कहाताहै, इसीतरह वहरानेके पीछे वहराने वाला अपने हाथ तथा जिससे वहराया हो वह बरतन धोवे या मांजे वह ' पश्चात्कर्म ' दोष कहाताहै, येभी दोनों दोष ' मृक्षित ' दोषमेंही गिणे जातेहै २, जो आहार सचित्त मट्टी—पाणी—अग्नि तथा वनस्पतिके उपर पडा हो, अथवा आहारवाला बरतन (कटोरदान आदि). उपर रही हुई सचित्त मट्टी आदि चीजोंपर

पडा हो, तथा जो पापड आदि पवनसे उडते हुए आकाशमें अधर रहे हो, अथवा जो आहार पवनसे भरीहुई मशक (दीवडी) आदिके उपर पडा हो और जो आहार बैल (बलद) आदि चलने फिरनेवाले जानवरोंकी पीठपर लदा (रखा) हुआ हो वैसा आहार लेवे वह ' निक्षिप्त ' दोष ३, कटोरी (वाटकी) आदि जिससे वहरानेका विचार हो उसमें पहलेका जो कोई सचित्त–अचित्त या मिश्र अन्नादि जो पडा हो उसको दूसरे किसी सचित्तादिके भेला डालकर उसी बरतनसे गृहस्थ वहरावे और साधु लेवे वह ' संहृत ' दोष ४, वहरानेवाला स्त्री या पुरुष जो ६०–७० वर्षसे अधिक वृद्ध उमरका होजानेसे कमजोरीके कारण आहारका बरतन आदि हाथमें अच्छीतरह पकड नहीं सकता हो और जिसके हाथमेंसे चीज पडजाती हो १, जो घरका मालिक न हो यानी अतिवृद्ध होजानेके कारण घरमें देने लेनेका जिसको आधिकार न हो २, जो नपुंसक हो ३, जिसका शरीर थर थर कांपता हो ४, जिसको बुखार (ताव) चढा हो ५, जो अंधा हो ६, जो आठवर्षसे कम उमरका बालक हो ७, जो मदिरा–भांग–गांजा आदिके नशेमें बेभान हो ८, जो पागल हो ९, जिसको भूत वगैरह लगा हो १०, जिसके हाथ अथवा पग कटे हुए हो ११, जिसके पगोंमें लकडीकी पावडियां पहरी हुई हो १२, जिसके

गलत्कुष्ट (झरता हुआ कोढ) हो १३, जिसके हाथपगोंमें वेडियां पहराई हुई हो १४, जो उखलमें धान्यादिको मुशलसे कूटती हो १५, घट्टीसे गहुं आदि अथवा शिला उपर कोई सचित्त वस्तु पीसती हो अथवा दलती हो १६, चणे आदि भूंजती (सेकती) हो १७, अराटिया कातती हो १८, चरखीसे रू पीलती हो १९, हाथोंसे रू छूटा छूटा करती हो २०, रू पींजती हो २१, विलोवणा (जलका) करती हो २२, भोजन करती हो २३, जिसके आठ महीनेसे (१) अधिक दिनका गर्भ हो २४, जो आहार नहीं खानेवाले बिल्कुल छोटे बालकको उठाये हुए हो अथवा बच्चेको स्तनपान कराती (धवराती) हो २५, जिसके हाथमें सचित्त लूण अथवा मट्टी–पाणी–अग्नि–पवनसे भरीहुई मशक (दीवडी)–वनस्पति तथा चलता फिरता जानवर हो अथवा फूलोंकी माला वगेरह पहरे हुए हो २६, जो छ कायका विनाश करती हो २७, ऐसे ऐसे मनुष्योंसे जो आहार लेवे वह 'दायक' दोष ६, देनेकी चीज थोडी होनेके कारण लज्जासे अथवा जुदी जुदी वहरानेमें देर लगेगी इस-

---

(१)—आठ महिनेसे अधिक दिनके गर्भवालीभी साधुके निमित्त उठना बैठना या नीचा नमना आदि परिश्रम न करती हुई जैसे जिस जगह बैठीहो वैसे उसी जगह बैठी हुई यदि वहरावे तो वहरना कल्पताहै, अन्यथा नहीं।

वास्ते सब चीजें एक साथ वहरादूं इस उत्कंठासे अथवा इनको सचित्त भक्षणका दोष लगाउं ऐसी द्वेष बुद्धिसे अथवा विना खयालसे कल्पनीय और अकल्पनीय वस्तुओंको भेल सेल करके जो आहार गृहस्थ वहरावे और ऐसा भेल सेलवाला आहार साधु लेवे वह 'उन्मिश्र' दोष ७, जो फल–रस आदि अचित्त न हुए हों अथवा जिसके अनेक मालिक हो उनमेंसे एक दो के परिणाम वहरानेके हुए हों लेकिन सबके परिणाम वहरानेके नहीं होवे तोभी उन सबके सामने वहरानेके परिणाम वाले वहरावे, अथवा जो दो चार साधु साथमें गोचरी गये हो उनके सबके मनमें 'ये फलादिक अचित्त होगयेहैं' ऐसा जचे विना जो फल–रस आदि लेवे वह 'अपरिणत' दोष ८, साधुके वास्ते दूध–दही–घी–शाक आदिमें हाथ तथा वरतन खरडे तथा शाक आदिका वरतन बिल्कुल खाली करके सब वस्तु साधुको वहरा देवे और साधु वहरलेवे वह 'लिप्त' दोष ९, घी–दूध–दही आदिके छांटे डालते हुए अथवा कोईभी आहार भूमि उर गिराते हुए वहरावे और साधु लेवे वह 'छर्दित' दोष १०, इसतरह ये दश दोष ग्रहणएषणाके होतेहैं, यानि साधुके वहरते हुए और गृहस्थके वहाराते हुए ये १० दोष लगते हैं।

अब ग्रासैषणा (मंडली) के पांच दोष. जो कि आहार–पाणी करते समय लगतेहैं. वे बतातेहैं—

" संजोयणाऽपमाणे, इंगाले धूमाऽकारणे पढमा । वसहि बहिरंतरे वा, रसहेऊ दव्व सजोगा ॥ १ ॥"

अर्थ.—उपासरेके बाहर, यानि गृहस्थके घरपर वहरते समय अथवा उपासरेमें आये बाद आहार-पाणी करते सयम अच्छा स्वाद बनानेके वास्ते एक वस्तुमे दूसरी वस्तु मिलावे वह पहला ' सयोजना ' दोष १, जितना आहार करनेपर मन-वचन-कायासे आलस आदि प्रमाद रहित स्वाध्याय-ध्यान-तप-संजमादिक की आराधना सुखसे हो सके उतना आहार साधु-साध्विओंको करना चाहिये, इससे अधिक आहार करे वह 'अप्रमाण' दोष २, रागरूपी अग्नि चारित्ररूपी बावनाचंदनको बालकर अंगारे (कोयले) के समान करदेताहै, वास्ते आहार-पाणी करते हुए अच्छे स्वादिष्ट आहारकी अथवा वैसा अच्छा आहार देनेवालेकी प्रशसा करे वह ' अगार ' दोष ३, जैसे अच्छा मकान धूंएसे मैला होजाताहै वैसेही द्वेषरूप धूंएसे चारित्ररूप सुदर मकान मैला होजाताहै, वास्ते आहार-पाणी करते हुए स्वादरहित-रूखे-सूखे खराब आहार की अथवा वैसा आहार

देनेवालेकी निंदा करे वह 'धूम्र' दोष ४, विना कारण (१) आहार-पाणी करे वह 'अकारण' दोष ५, ये मंडलीके पांच दोषहैं, इनको टालकर अच्छी क्रियामें वर्तनेवाले साधु-साध्विओंको आहार करना चाहिये।

६—मुहपत्ति-पडिलेहण-विचार—

उत्कटिक आसन (खडे पगों) से बैठकर मुहपत्ति खुल्ली करके " सूत्र अर्थ साचो सद्दहुं १ " ऐसा बोलता हुआ अपने सामनेका पसवाडा देखे १, बाद मुहपत्ति पलटके " सम्यक्त्वमोहनीय-मिथ्यात्वमोहनीय-मिश्रमोहनीय परिहरुं ३-४ " ऐसा बोलताहुआ दूसरा पसवाडा देखकर तीन पुरिम करे, यानि मुहपत्तिको तीन वेर

(१)— भूख मिटानेके वास्ते १, आचार्य-उपाध्याय-बालक-वृद्ध-तपस्वी-बीमार आदिकी वेयावच्च (सेवा-भक्ति) करनेके लिये २ इरियासमितिकी शुद्धिके वास्ते ३, संजम पालनेके वास्ते ४, जीवितव्य (आयुष) की रक्षाके वास्ते ५, सूत्र तथा अर्थ चिंतनरूप धर्मध्यानको स्थिर करनेके लिये ६, इन छः कारणोंसे साधु-साध्वी आहार-पाणी करें। इसी तरह आहार न करनेकेभी छः कारणहैं, वे इस मुजबहैं-बुखार (ताव) आदि कोईभी रोग होने पर १, देवता-मनुष्य तथा तिर्यंचोंके किये हुए उपसर्ग होने पर २, भूख सहन करनेके वास्ते ३ विषय विकारको दबाकर ब्रह्मचर्य (शीलव्रत) की रक्षाके लिये ४, वर्षा बरसती हो, धूंअर पडती हो, रस्तेमें देडके अलसिये आदि त्रस जीव अधिक उत्पन्न हुए हों तो उनकी विराधना न होनेके वास्ते ५, आयुषका अंतिम समय नजीक मालूम होनेपर अनशन आदि करनेके लिये ६ आहार पाणी न करें।

ऊची नीची करके खंखेरे ३—४, फिर दूसरी वेर पलटके " कामराग—स्नेहराग—दृष्टिराग परिहरुं ३-७," ऐसा बोलता हुआ उस पसवाडेको देखकर तीन पुरिम करे ३—७, बाद मुहपत्ति दुप्पट करके दो अथवा तीन वधूटक करके (सल पाडके) जीमणे हाथकी अगुलियोमे पकडकर " सुदेव—सुगुरु—सुधर्म आदरुं ३—१० " बोलते हुए दोनों जघाओके वीचमें लंवा किये हुए डावे हाथकी हथेली उपर तीन अक्खोडे (१) करके ३—१० " कुदेव—कुगुरु—कुधर्म परिहरुं ३—१३ " कहते हुए तीन पक्खोडे (२) करे ३—१३, फिर " ज्ञान—दर्शन—चारित्र आदरुं ३—१६ " कहते हुए तीन अक्खोडे (३) करके " ज्ञानविराधना—दर्शनविराधना—चारित्रविराधना परिहरु ३—१९ " बोलते हुए तीन पक्खोडे करे, इसी तरह तीसरी वारभी " मनोगुप्ति—वचनगुप्ति—

(१)—हथेलीके मुहपत्तिका स्पर्श न होवे उस तरह ऊची नीची खखेरते हुए अंगुलियोंकी तरफसे पजेकी तरफ मुहपत्ति लेजाना उसको ' अक्खोडे ' कहतेहैं । (२)—हथेलीके मुहपत्तिका स्पर्श होवे वैसे पूजते हुए पंजेकी तरफसे अंगुलियोंकी तरफ मुहपत्ति लेजाना, उसको पक्खोडे ' कहतेहैं । (३)—डावे हाथकी अगुलियोंमें जीमणे हाथकी तरफ पकडी हुई मुहपत्तिसे दोनों जघाओंके वीचमें लवे किये हुए जीमणे हाथकी हथेलीमें " ज्ञानविराधना " आदि ९ बोल बोलते हुए ६ पक्खोडे और तीन अक्खोडे करने, ऐसा पाच पडिक्कमणेकी पुस्तकमें तथा रत्नसागर आदिमें लिखाहै, परतु प्रवचनसारोद्धारकी टीका तथा महोपाध्याय-श्रीमत्क्षमाकल्याणजी गणि रचित 'साधुविधिप्रकाश' आदिमें नव अक्खोडे और नव पक्खोडे एकली डावी हथेली परही करनेका लिखाहै इस वास्ते हमनेभी मुख्यपणेसे यह ही बात लिखीहै ।

कायगुप्ति आदरुं ३—२२ ” कहते हुए तीन अक्खोडे करके “ मनोदंड—वचनदंड—कायदंड परिहरुं ३—२५ ” कहते हुए तीन पक्खोडे करे । इसतरह तीन वार तीन तीन (३—३) करनेपर नव तो अक्खोडे और नव पक्खोडे छ पुरिम तथा एक देखनेरूप दृष्टिपडिलेहण. इन सबको मिलाने पर २५ बोल सहित २५ पडिलेहण मुहपत्तिकी (१) होतींहैं । बाद पहले लिखे मुजबही वधूटक करके जीमणे हाथमें रखी हुई मुहपत्तिसे “(२) हास्य-रति-अरति परिहरुं ३ ” बोलते हुए डाबी भुजा (खंधेसे कुणीतक) के बीचमें-जीमणी बाजु तथा डाबी बाजु प्रमार्जन करे, बाद “ भय—शोक—दुगंछा परिहरुं ३—६ ” कहते हुए उसी तरह डावे हाथमें रखी हुइ मुहपत्तिसे जीमणी भुजाके बीचमें—डाबी बाजु और जीमणी बाजु प्रमार्जन करे । बाद मुहपत्तिके दोनों छेडे दोनों हाथोंसे पकडकर “ कृष्णलेश्या—नीललेश्या—कापोतलेश्या परिहरुं ३—९ ” कहते हुए ललाटके तथा “ ऋद्धिगारव—रसगारव—सातागारव परिहरुं ३—१२ ” बोलते हुए मुखके और “ मायाशल्य—नियाणा-

(१)—कपडोंकीभी येही पचीस (२५) पडिलेहणहैं, यानि मुहपत्तिकी तरहही पचीस (२५) बोल बोलते हुए कपडेभी पडिलेहणे चाहियें । (२)-प्रतिक्रमणकी पुस्तकोंमें 'कृष्ण लेश्या' आदि बोल यद्यपि पहले लिखेहैं, परंतु साधुविधि प्रकाश-प्रवचनसारोद्धारकी टीका'-मुहपत्ति पडिलेहणकी सज्झाय तथा स्तवनादिमें 'हास्य' आदि बोल पहले होनेसे हमनेभी इसी तरह लिखेहैं ।

शल्य–मिच्छादसण शल्य परिहरुं ३–१५ " बोलते हुए हृदय (छाती) के बीचमें जीमणी बाजु तथा डावी बाजु प्रमार्जन करे, बाद जीमणे हाथमें मुहपत्ति लेकर " क्रोध–मान परिहरुं २–१७ " बोलते हुए डावे खंधे (१) उपर तथा डावी कक्षा (कांख) के नीचली तरफसे डावी पीठ उपर प्रमार्जन करे, बाद डावे हाथमें मुहपत्ति लेकर " माया–लोभ परिहरु २–१९ " बोलते हुए जीमणे खंधे उपर तथा कक्षा (कांख) के नीचली बाजुसे जीमणी पीठ उपर प्रमार्जन करे, बाद " पृथ्वीकाय–अप्पकाय–तेउकाय रक्षा करुं ३–२२ " बोलते हुए जीमणे हाथमें लिये हुए ओघेसे जीमणे पगके और " वाउकाय–वनस्पतिकाय–त्रसकाय रक्षाकरुं ३–२५ " बोलते हुए डावे पगके बीचमें जीमणी तरफ तथा डावी तरफ प्रमार्जन करे, इस तरह अगकी २५ पडिलेहण होती है,

(१)—यद्यपि 'साधुविधिप्रकाश' तथा 'प्रवचनसारोद्धार' की टीकामें लिखाहै कि–जीमणेहाथमें रखी हुई मुहपत्तिसे जीमणा खंधा और डावे हाथमें रखी हुई मुहपत्तिसे डावा खंधा प्रमार्जन करे, बाद डावे हाथमें रही हुई मुहपत्तिसे जीमणी कांखके नीचेसे जीमणी पीठ प्रमार्जे, बाद जीमणे हाथमें रही हुई मुहपत्तिसे डावी कांखके नीचेसे डावी पीठ प्रमार्जे, परन्तु पडिक्कमणे आदिकी पुस्तकोंमें (जैसे हमने बतायाहै) ऐसेही लिखाहै और बोलभी २-२ साथहीहै, इससे कुछ सुविधा (सहलाई) भीहै, इस वास्ते हमने यहही क्रम रखाहै।

ये पुरुषोंके लियेहैं, स्त्रियोंके तो दो हाथोंकी ३–३, मुखकी ३, और दो पगोंकी ३–३, मिलाकर १५ पडिलेहणे अंगकी होतीहैं ।

७—उपकरण विचार (साधुके १४ उपकरण)—

१–पात्रे (पातरे)–जिस पात्रेके गोलाइकी परिधि तीन (३) वेंत और चार (४) अंगुल होवे वह मध्यम पात्रा, जिसकी परिधि इससे कमती होवे वह जघन्य और जिसकी परिधि इससे अधिक होवे वह उत्कृष्ट पात्रा कहाताहै, जो बराबर गोल होवे टेढामेढा न होवे एवं जिसमें छिद्र (फांडा) या गांठ अथवा खरदराश न होवे वैसा पात्रा रखना चाहिये, क्योंकि ओघनिर्युक्ति आदि ग्रंथोंमें ऐसे अपलक्षण वाला पात्रा नुकसान दायी कहाहै । २ पात्रबंधन (झोली)–पात्रोंके प्रमाणसे होतीहै, यानि पात्र छोटे या मोटे जो होवे उनको झोलीमें बांधके गांठ लगाने पर चार अंगुल छेडे बाकी रहें उतनी बडी करनी चाहिये । ३ पात्रस्थापन–वह कहाताहै जो विहारादिके समय झोलीमें बांधे बाद पात्रोंके नीचली तरफ ऊनी वस्त्रका टुकडा बांधा जाताहै, जिसके चारों खुणे डोरी लगी रहतीहै, यह लंबा चौडा (समचोरस) १६ अंगुल होताहै । ४ गुच्छा–वह

कहाताहै जो १६ अंगुल समचोरस उनी कपडा होताहै, उसके बीचमें एक छिद्र (फांडा) होताहै जिससे वह झोलीके छेडोंमें डालकर पात्रोंपर बांधा जाताहै । ५ पात्रकेसरिका (पूजणी)—यहभी १६ अंगुल लंबी होतीहै । ६ पडले—जो गौचरीके समय पात्रोंकी झोली हाथमें लिये बाद उपरसे ढांके जाते हैं जिससे संपातिम (उडते हुए) जीव आदिकोंकी रक्षा होसके, क्योंकि पात्रोंकी (१) झोली खुली रखनेसे उडते हुए छोटे छोटे जीव अथवा पवनसे कंपते हुए वृक्षोंके पत्र (पांन)—पुष्प—फलादिक तथा सचित्त रज—पाणी वगेरह एवं आकाशमें फिरनेवाले पक्षियोकी विष्टा (वीठ) अथवा पवनसे उडता हुआ धूलका समुदाय आदि पात्रोंमे पडजाताहो उनकी रक्षाके वास्ते पडले रखे जातेहैं, इससे यह साफ मालूम हुआकि—गोचरी जाते समय हाथमें लीहुई पात्रोंकी झोली उपर पडले जरूर ढांकने चाहिये, जिससे उपर कही चीजें पात्रोमें पडकर आहार अकल्पनीय न होवे । पडलोंका कपडा यदि जाडा (गडवाँर) होवे तो चौमासेमें पांच, सीयालेमें चार, उन्हालेमें

(१)—" अस्थगिते पात्रके सम्पातिमा सत्त्वा पतन्ति, पवन प्रकम्पित पादपादे पत्र-पुष्प-फलादीनि सचित्तरज-सलिलादयो-व्योमवर्त्ति विहङ्गम पुरीष-वात्याहत-पांशु प्रकरादयश्च निपतन्ति, ततस्तत्संरक्षणार्थं पटलानि ध्रियन्ते" प्रवचनसारोद्धार वृत्तिः पत्र १२० ।

तीन रखने, यदि कुच्छ थोडासा बारीक व छिद्रा कपडा होवेतो चौमासेमें छः सीयालमें पांच उन्हालेमें चार रखने, और यदि ज्यादा बारीक व छिद्रा कपडा होवेतो चौमासेमें सात, सीयालेमें छः, उन्हालेमें पांच पडले रखने चाहिये, तीन तरहके बतानेका मतलब यहहै कि–सब पडलोंके पट मिलाने पर उतनी जाडाइ होनी चाहिये कि जिनको आंखों पर लगानेसे सूर्यकी किरणेंभी देखनेमें न आवें। एक एक पडलेकी लंबाई अढाई अढाई हाथ और चौडाई ३६–३६ अंगुल यानी डेढ डेढ हाथ होनी चाहिये। ७ रजस्त्राण–पात्रके चारों तरफ विटोलने पर चारों तरफसे चार चार अंगुल पात्रके भीतर कपडा चलाजाय उतना बडा होना चाहिये, इससे यह मालूम होताहै कि–पहले एक एक पात्रका रजस्त्राण जुदा होताथा, परंतु आज कलतो रजस्त्राणके वास्ते एक कपडा रखाजाताहै, जिसका एक एक पट एक एक पात्रके बीचमें डाला जाताहै, वहभी लंबाई व चोडाइमें आखी जोडके सज जावे उतना बडा होना चाहिये, ये सात उपकरणतो पात्रों के हैं, इनके सिवाय शरीर संबंधी सात उपकारण इस प्रकारहैं:—

८–९–१० तीन कल्प (ओढनेके कपडे)–दो तो सूतु चद्दर और एक ऊनी कंबल अथवा दो कंबल

और एक चद्दर लंबाइमें साढेतीन हाथ और चौडाईमें अढाई हाथ होतीहै, ऐसे प्रवचनसारोद्धार तथा ओघनिर्युक्ति और उनकी टीकामें लिखाहै, परंतु श्रीजिनपतिसूरिजीमहाराजने पंचलिंगीकी टीका[1]में लिखाहै कि-गीतार्थोंकी आचरणासे आजकल इतने प्रमाणके चद्दर कंबल आदि कल्प नहीं रखे जाते, क्योंकि ऐसे कल्पोंसे शरीर बरावर न ढकनेके कारण अच्छी तरह निर्वाह नहीं हो सकता (१), इस वास्ते संख्या (गिनती) में और लंबाई-चौडाईमें अधिक भी रख सकतेहैं। ११ रजोहरण (ओघा)-चोवीस अगुलकी दंडी और आठ अंगुलकी दसिया (फलियां) दोनों मिलकर बत्तीस अगुलका लंबा ओघा होना चाहिये, यदि दंडी ज्यादा लंबी हो तो दसियां कमती करना और यदि दंडी कमती लंबी होवे तो दसियां अधिक लंबी करनी चाहिये, लेकिन दंडी और दसियां दोनों मिलकर ओघेकी लंबाई बत्तीस अंगुलसे ज्यादा न होनी चाहिये, इससे यह जानना कि-ढूंढिये लोग जो वहुत लंबा ओघा रखते हैं वह शास्त्र विरुद्धहै, ओघेकी दसियां गांठ विनाकी (२) रखना शास्त्रकारोंने कहाहै, वास्ते दसियोंके गांठ लगानाभी शास्त्र विरुद्धहै। १२ मुहपत्ति-एक वेंत और चार अंगुल

(१) देखो मुद्रित पचलिंगी बृहद्वृत्ति। (२) "अज्झुसिर-अगथिला दशिका निषद्या च यस्य तदशुषिरम्" ओघनिर्युक्तिवृत्तिपत्र २१०

यानि १६ अंगुल समचोरस होतीहै, अथवा नाकमें धूल न जानेके लिये काजा निकालते हुए और दुर्गंधके कारण नाकमें रोग पैदा न होनेके वास्ते कारणवश अधिक दुर्गंधिवाली जगहमें ठल्ले बैठते हुए नाक और मुख पर मुहपत्ति बांधना चाहिये, इस वास्ते मुहपत्ति तिखुणी करके गरदनके पिछली तरफ दोनों छेडोंसे गांठ लगा सके उतनी लंबी–चौडी समचोरस करनी चाहिये। परन्तु ढूंढिये नाक खुला रखकर हमेशां बाँधी रखते हैं। (१) यह सर्वथा शास्त्र विरूद्ध है। १३ मात्रक नामका एक पात्रा होताहै जिसमें गृहस्थके पास आहारादिक लेके झोलीमें रहे हुए बडे पात्रेमें डाला जाताहै, अथवा गुरु या बिमार साधुके वास्ते घृतादिक उत्तम चीज लाई जाती है, एक साधुके आहारका समावेश हो सके उतना बडा यह मात्रक होताहै। ४१ चोलपट्टा–चार हाथ लंबा होताहै, वृद्धोंके लिये दो हाथका भी लंबा रखा जा सकताहै।

ये १४ औघिक उपकरण कहे जाते हैं, इनके सिवाय संथारिया–उत्तरपट्टा–दंडा वगेरह औपग्रहिक उपकरण कहाते हैं, संथारिया और उत्तरपट्टा लंबाइमें अढाइ हाथ और चौडाईमें एक हाथ चार अंगुल होता है,

१–इसका विशेष खुलासा आगमानुसार मुहपत्ति का निर्णय और जाहिर[२] उद्घोषणा नं० १-२-३ में देखो।

दंडा अपने अपने खंधेतक पहूंचे जितना लंबा होना चाहिये ।

(२—साध्वीके २५ उपकरण)

साध्विओंके औधिक उपकरण पच्चीस होतेहैं, उनमेसे चोलपट्टा छोडके बाकी १३ उपकरणतो साधुओंके समानही साध्विओंको भी रखनेकेहैं, चउदहमा उपकरण कमढक नामका होताहै, जो कि कांसेकी वडी कटोरी (तासली) के आकार जैसा तुवेका होताहै, और वह एक एक साध्वीके एक एक होताहै, उसीमें साध्वीयां आहार–पाणी करतीहैं । इनके सिवाय ग्यारह उपकरण इस मुजबहैं–१५ अवग्रहानंतक–गुह्यप्रदेशको ढाकनेका एक कपडा जो पोतमें गडवार ओर स्पर्शमे मुलायम हो, वह शीलव्रतकी रक्षाके वास्ते रखा जाताहै, इसका आकार जहाज (वाहण) की तरह दोनो छेडोपर सांकडा और वीचमे चौडा होताहै, यह लंगोटकी तरह बांधा जाताहै । १६ पट्टक–चार अगुल अथवा कुच्छ अधिक चौडा और अपनी कमरके अनुसार लंबा कपडेका चीरा होताहै, उसके एक छेडे पर नाकी और दूसरे छेडे पर बोर लगा रहताहै, जिससे वह पन्द्रहवें उपकरण अवग्रहानतकके आगले तथा पिछले दोनों छेडे दबाकर कमरमें बांधा जाताहै । १७ उरुकार्ध–

आधि साथलतक पहूंच सके उतना तो चौडा और चारों तरफसे आखी कमर ढंकजाय जितना लंबा कपडा होताहै, उसमें जहां जहां चाहिये वहां वहां कस लगाके दोनों साथलोंमें तथा साथलोंके बीचमें उसतरहसे बांधना कि जिससे अवग्रहानंतक तथा पट्टक दोनों दबजाय और पहरे हुए जांगियेकी तरह देखनेमें आवे १८ चलनिका–यहभी अर्धोरुकके जैसीही जांगियेकी तरह होतीहै, और उसी मुजब साथल आदिमें बांधी जातीहै, केवल चौडाइमें गोडोंतक पहूंचे जितनी होतीहै। १९ अंतर्निवसनी (मोटे सालडेके भीतर पहरनेका छोटा साडला)–कमरसे लगाके आधि जंघा (पिंडि) तक पहूंचे उतनी लंबी होतीहै। २० बाह्यनिवसनी (मोटा साडला)– कमरसे लगाके पगों तक पहूंचजाय उतनी लंबी होतीहै, और वह चारों तरफसे कंदोरेकी तरह डोरीसे बंधी हुई होतीहै। २१ कंचुक (कंचुआ) हृदय ढांकनेके वास्ते अढाई हाथ लंबा और एक हाथ चौडा अथवा अपने अपने शररिके अनुसार लंबा चौडा होताहै, और वह स्तनोंके उपरसे डाबे जीमणे दोनों तरफ कसोंसे बांधा जाताहै। २२ उपकाक्षिका–डेढ डेढ हाथ लंबा चोडा समचोरस होता है, उसके दोनों तरफ नाकी और बोर लगाके जीमणी तरफके पेट तथा पीठ को ढांककर डाबे खंधे उपर तथा डाबे

पसवाडे बांधी जातीहै। २३ वैकक्षिका—यहभी डेढ हाथ समचोरस होतीहै, परंतु यह डाबी तरफके पेट तथा पीठको ढांककर जीमणे खधे उपर तथा जीमणे पसवाडेमें नाकी धोरसे बांधी जातीहै। २४ संघाटी (साडी-चद्दर) ओढनेके लिये चार होतींहैं, उनमें लवाईतो सबकी साढेतीन तीन हाथ अथवा चार चार हाथ होतीहै, और पने (चौडाइ)में एक दो हाथकी, दो तीन तीन हाथकी तथा एक चार हाथकी होतीहै, उनमेंसे दो हाथके पने वाली तो उपासरेंमेभी हरवक्त ओढे रहना,क्योंकि उपासरेंमेंभी साध्वी खुल्ले सरीरसे कभी नहीं बैठ सकती, तीन हाथके पंने वाली एकतो गोचरी जानेके समय और दूसरी ठल्ले जाते समय ओढनी चाहिये, जो चार हाथके पंनेवाली हो वह मदिर, व्याख्यान, पूजा आदिमें जाते समय ओढनी चाहिये। २५ स्कधकरणी—यह चार चार हाथ लबी चौडी समचोरस होतीहै और चोवडी करके खंधे उपर रखी जातीहै, जिससे ओढेहुए चद्दर वगेरह कपडे पवनसे इधर उधर न होनें पावें, और यदि कोई साध्वी अधिक रूपवान होवे तो लोकोंमें उसकी कुछ कुरूपता दिखानेके वास्ते कंचुआ वाधे वाद इसी स्कधकरणीको गोलमटोल करके पीठमें खधोंके नीचली तरफ दूसरे कपडेके चीरेसे बांधकर उपरसे उपकक्षिका तथा वैकक्षिका बांध दी जातीहै, जिससे कूवडीके समान आकार देखनेमें

आवे । ये २५ औघिक उपकरण पहलेके जमानेमें साध्वियां रखतीथीं, लेकिन "साहूणऽग्गोयरओ, वुच्छिन्नो दूसमाणुभावाओ । अज्जाणं पणवीसं, सावयधम्मो य वोच्छिन्नो ॥ १ ॥" तीर्थोद्‌गार पयन्ने की इस गाथाके अनुसार वह प्रवृत्ति आजकल विच्छेद होगइहै । औपग्रहिक उपकरण साधुके जैसेही साध्विओंकेभी होते हैं ।

८ स्थंडिल–पाडिलेहण–विचार—

साधु तथा रात्रिपौषधिक श्रावक संध्या समय पडिक्कमणेके पहले "आगाढे आसन्ने" इत्यादि पाठ बोलते हुए और गोल चक्करकी तरह फिरातेहुए ओघेसे या चरवलेसे २४ मांडले करके २४ स्थंडिल पडिलेहतेहैं उनमें ठल्ले मातरे जानेकी भूमि धारी जाती है, अत्यंत अशक्तिवालेके वास्ते संथारेके दोनों तरफ कमसे कम १–१ हाथ जमीन छोडकर नज्दीक, मध्यम और दूर तीन तीन मिलाकर छ मांडले करने, थोडी शक्तिवालेके वास्ते उपाश्रयके दरवाजे की मांहिली बाजु दोनों तरफ ३–३ मिलाकर छ मांडले करने, कुछ अधिक शक्तिवालेके वास्ते उपाश्रयके दरवाजेसे बाहर दोनों तरफ ३–३ मिलाकर छ मांडले करने, और जिसकी शक्ति ठीकसर होवे उसके वास्ते सौ हाथ दूर जो जमीन देख रखी हो उसके सामने इसी तरह छ मांडले करने, इस तरह २४ मांडले होतेहैं ।

९ पंचमहाव्रत-भावना-विचार—

प्राणातिपात आदि महाव्रतोंको स्थिर (मजबूत) करनेके लिये जो भावी जाय (अभ्यास करी जाय) वे भावना कहातीहैं, जैसे अभ्यास किये बिना विद्या विसर्जित होजातीहै यानि भूलजातेहैं, वैसे ही भावनाओंका अभ्यास किये बिना अनेकतरहके दोष लगनेसे महाव्रत मलिन होजातेहैं, वास्ते भावनाओंका स्वरूप अच्छीतरह जानकर उनका खूब अभ्यास करना चाहिये, वे भावना एक एक महाव्रतकी ५-५ होनेसे पांचों महाव्रतोंकी पच्चीस होती हैं जो कि प्रवचनसारोद्धार गाथा ६३६ वीं से ६४० तक मे आगे लिखे मुजब हैं।

पहले महाव्रतकी पांच भावना—

इरियासमिए सया जए,उवेह भुंजेज्ज व पाणभोयणं। आयाणनिक्खेवदुगुंछसंजए, समाहिए संजयए मणो वइ। १।

अर्थ— ईर्यासमितिमें सदा यत्न रक्खे, यानि चलते हुए चार हाथ भूमि आगे आगे देखता चले १, आहार या पाणी देखके वापरे, यानि वहरते समय तथा खाने पीनेके समय आहार तथा पाणी देखके वहरे और खाये पीये २, हरएक चीज लेते तथा रखते समय उस चीजको तथा जमीनको देखकर तथा

पूंज–प्रमार्ज करके लेवे अथवा रखे ३, समाधिमें वर्तता हुआ साधु अपने मन तथा वचनको संयमित रखे अर्थात् मनसे किसीका बुरा नहीं चिंतवे ४, वचनसे किसीको बुरा लगे वैसा न बोले, तत्त्वार्थ सूत्रमें एषणा समितिको पांचवीं भावना कही है ५। दूसरे महाव्रतकी पांच भावना—

अहस्स सच्चे अणुवीय भासए, जे कोहलोहभयमेव वज्जए ।
से दीहरायं समुपेहिया सया, मुणी हु मोसं परिवज्जए सिया ॥ २ ॥

अर्थ—जो साधु हास्य रहित सत्य बोलने वाला हो अर्थात् किसीकी हांसी–मश्करी नहीं करता हो १, अच्छीतरह सोच विचारकर बोलने वाला हो २, और क्रोध ३ लोभ ४ तथा भय ५ को वर्जता है वो ही मुनि मोक्षको नज्दीक देखनेके स्वभाववाला होकर निश्चयसे मृषावादको सदा त्यागता है।

तीसरे महाव्रतकी पांच भावना—

सयमेव उ उग्गहजायणे घडे, मइमं निसम्मा सइ भिक्खु उग्गहं ।
अणुन्नविय भुंजीय पाणभोयणं, जाइत्ता साहम्मियाण उग्गहं ॥ ३ ॥

अर्थ— साधु खुद अपने मुखसे घरधणीके पास उतरने योग्य मकान आदिकी याचना करे, दूसरे गृहस्थ आदिके मुखसे न करावे १, मतिमान—साधु रजा लेकर उतरे बाद उसी जगहमेंसे यदि तृणभी लेना हो तो घरधणीकी आज्ञा सुनकर लेनेका उद्यम करे, विना आज्ञाके न लेवे २, साधु अवग्रह (मकान आदि) की याचना सदा स्पष्ट मर्यादासे करे, यानि एक वार घरधणी ने दिये हुए अवग्रहमेंभी बीमारी आदिके कारण ठल्ले मात्रे जानेके लिये अथवा हाथ पग धोनेके लिये स्थानकी याचना घरधणीके पास फिरसे करे ३, आहार—पाणी करना हो अथवा कपडा तथा पात्रा आदि कोई भी उपकरण नयेसर वापरनेके वास्ते निकालना हो तो गुरु अथवा जो वडे हो उनकी आज्ञा विना नहीं करना, यदि आज्ञा विना करे तो गुरुअदत्त दोष लगे ४, जिसमें उतरना हो उसमे पहलेसे उतरे हुए अपने समान आचार वाले साधुओंकी रजा लेकर उतरना और उस मकान मांहिली हर एक चीजभी उनकी रजा लेकर वापरनी ५। चौथे महाव्रतकी पांच भावना—

आहारगुत्ते अविभूसियप्पा, इत्थी न निज्झाय न संथवेज्जा ।
बुद्धे मुणी खुड्डकह न कुज्जा, धम्माणुपेही संधए बंभचेरं ॥ ४ ॥

अर्थ—आहार गुप्त हो, यानि सदाके प्रमाणसे अधिक अथवा चीकणा-मीठा आदि पुष्टिकारक आहार विना कारण न करे १, अविभूषित आत्मा हो, अर्थात् अपने शरीरकी स्नान-विलेपन आदिसे तथा कपडे आदि उपकरणोंकी धोने धानेसे विभूषा न करे २, स्त्रिओंको तथा उनके हाथ-पग-स्तन आदि अवयवोंको एकाग्र दृष्टिसे न देखे ३, स्त्रिओंसे परिचय न करे, यानि स्त्रीके वापरे हुए आसन-पाट वगेरह दो घडिके पहले न वापरे ३, जिसमें स्त्रिओंका रहेवास हो अथवा स्त्रिओंकी तस्वीरें लगी हों तथा पशु अथवा नपुंसकोंका रहेवास हो उस मकानमें साधुको न रहना ४, तत्त्वके जाणकार मुनि क्षुद्रकथा (स्त्री संवंधी कथा अथवा केवल स्त्रीओंकी, साध्वी केवल पुरुषोंकी पर्षदा—सभामें धर्मकथा—व्याख्यानादि) न करे ५, इन पांच भावनाओंसे भावित अंतःकरणवाला धर्मसेवनमें तत्पर मुनि अपने ब्रह्मचर्यको खूब पुष्ट करताहै । पांचमें महाव्रतकी पांच भावना—

जे सद्दरूवरसगंधमागए, फासे य संपप्प मणुन्नपावए ।
गेहिं पओसं न करेज्ज पंडिए, से होइ दंते विरए अकिंचणे ॥ ५ ॥

अर्थ—जो पंडित (तत्त्वका जाण) साधु इष्ट अथवा अनिष्ट यानि भले अथवा बुरे शब्द १, रूप २,

रस ३, गंध ४ और स्पर्शोंको प्राप्त करके राग अथवा द्वेष न करे वो इद्रियोंको जीतनेवाला सर्व सावद्य योगसे निवृत्त हुआ अपरिग्रही (परिग्रह रहित) होताहै, यानि पांचों इद्रियोंके विषयोमें राग द्वेष करनेसे पचम महाव्रतकी विराधना होतीहै और इनमें राग द्वेष न करना ये ही पांचवे महाव्रतकी पांच भावनाहैं ॥

१० सडाशक-प्रमार्जन-विचार—

पिछली (लारली) तरफ कमरसे नीचे जीमणा पग, दोनों पगोंके विचला भाग और डावा पग इन तीनोंको ओघेसे प्रमार्जन करना ३, इसी तरह आगली तरफभी कमरसे नीचे जीमणा पग दोनों पगोंके विचला भाग, तथा डावा पग, इन तीनोंको ओघेसे प्रमार्जे ६, बाद नीचे वैठते हुए आगे पीछेकी भूमि तीनवार ओघेसे प्रमार्जे ९, बाद जीमणे हाथमे ली हुइ मुहपत्तिसे ललाटकी जीमणी बाजूसे लगाकर सारा ललाट, सीधा किया हुआ सारा डावा हाथ तथा भेला करके पिछली तरफसे उसी डावे हाथको कूणी तक प्रमार्जन करे १० बाद डावे हाथमे ली हुई मुहपत्तिसे ललाटकी डावी बाजूसे लगाकर सारा ललाट, सीधा किया हुआ सारा जीमणा हाथ तथा भेला करके पिछली तरफसे उसी जीमणे हाथको कूणीतक और लगतेही ओघेकी

दंडी प्रमार्जें ११, बाद जीमणे हाथमें मुहपत्ति लेकर साधु डावे गोडेको तथा श्रावक चरवलेकी दशियां तीनवार प्रमार्जें १४, खडे होकर आसनके पिछली तरफ जाते हुए लारेकी भूमि तीन वेला प्रमार्जें १७, इस तरह सब जगहके मिलानेपर १७ वेला प्रमार्जन होताहै, इसीका नाम संडाशक प्रमार्जन (संडासे पूंजना) है । वांदणे देते हुए पहले वांदणेमें १७, और दूसरेमें १४ प्रमार्जना होती हैं, क्योंकि दूसरी वेला वांदणे देकर खडे हुए बाद आसनके पिछली तरफ नहीं जाते, किंतु उसी जगह खडे रहतेहैं, जिससे पिछली भूमि प्रमार्जनेके तीन संडाशक छूट जाते हैं, इसी प्रकार खमासमणा देना, अब्भुट्ठिया खमाना आदिमेंभी चउदे ही संडाशक पूंजे जातेहैं ॥

११ असज्झाय-विचार—

असज्झायके मुख्यतया आत्मसमुत्थ (साधु साध्वियोंसेही होने वाला) और परसमुत्थ (गृहस्थ आदिसे होने वाला) ये दो भेद हैं, १ आत्मसमुत्थ के भी दो भेद हैं— १—साधुके या साध्वीके ठोकर वगैरह लगनेसे अथवा नासूर भगंदरादिकोंमेसे रुधिर निकले तो उपासरेसे सो हाथ दूर जाकर पाणीसे धोकर पट्टा बांधे, बाद उसको और दूसरोंको सूत्र पढना पढाना कल्पताहै, यदि वह पट्टा रुधिरसे भींजजाय तो उसी पट्टेके उपर राख

भुरकाके दूसरा पट्टा वांधे, यदि दूसराभी भींजजाय तो उसी मुजब तीसरा पट्टा वांधे, वाद पढना कल्पताहै, यदि तीसरा पट्टाभी भींजजाय तो दूसरे साधु साध्वी सो हाथके बाहर अन्य उपासरे आदिमें जाकर वांचे–पढें।

२–जिस साध्वीको अटकाव आयाहो उनको तो तीन दिनतक कुच्छभी वाचना-पढना नहीं कल्पता, परतु यदि एक पट्टा भींजजाय तो उस पट्टेके उपर राख भुरकाके दूसरा पट्टा वांधे, वहभी यदि भींजजाय तो उसीतरह राख भुरकाके तीसरा पट्टा वांधे, इसी तरह करते हुए उपराउपरी सात पट्टे बांधे वहां तकतो अन्य साध्वियोको उसी उपासरेमें वांचना-पढना कल्पताहै, यदि सातमा पट्टाभी रुधिरसे भींजजाय तो सो हाथके बाहर अन्य उपासरेमें जाकर पढे, अटकावके तीन दिन बीतजानेके बादभी यदि रुधिर देखनेमें आने परभी पट्टावाधकर उसको खुदकोभी वाचना-पढना कल्पताहै, यदि पट्टा रुधिरसे भींजजाय तो पहले लिखे मुजब दूसरा–तीसरा पट्टा वांधते हुए उपराउपरी ७ सात पट्टे वांधकेभी पढना कल्पताहै, परन्तु सातमा पट्टा भींजे वाद जिसको अटकाव आयाथा उस साध्वीको पढना नहीं कल्पता और अन्य साध्वियोंकोभी सो हाथके वाहर दूसरे उपासेरमें जाकर पढना चाहिये।

२ पर समुत्थ असज्झायके मुख्य पांच भेद और उनके अवांतर भेद इस मुजब हैं—

१—संजम-घातक—

१–धूंअर (१) (धूंद) पडनी शुरु होवे वहांसे लगाकर जहांतक बंध न होवे वहांतक असज्झाय.

२–सचित्तरज (२)–निरंतर पडे तो तीन दिनके बाद जहांतक बंध न होवे वहांतक असज्झाय.

३–भिन्नवर्षा–जिसकी धाराओंसे पाणीमें बुद्बुदे (परपोटे) ऊठने लगें वैसा जोरदार वर्षाद् निरंतर वर्षे तो तीन दिनके बाद, जिससे पाणीमें बुद्बुदे न ऊठे वैसा थोडा जोरदार वर्षाद् निरंतर वर्षे तो पांच दिनके बाद, और बिल्कुल झीणे झीणे फूसार जैसा वर्षाद् निरंतर वर्षे तो सात दिनके बाद जबतक बंध न होवे तबतक असज्झाय ।

(१)—धूँअर पडनी शुरु होतेही सबजगह अप्कायके जीव फैलजातेहैं, वास्ते उस समय अपना सारा शरीर कंबलीसे ढांककर किसी ऊंडी ओरडीमें साधुको बैठना चाहिये, मुखभी नहीं उघाडना, प्रतिक्रमण आदि क्रियाभी धूँअर मिटे बाद करनी चाहियें, इसी तरह सचित्तरज पडनी शुरु होवे वहांसे लगाकर तीन दिन बीतनेके बाद तथा तीनों प्रकारकी भिन्न वर्षामें अनुक्रमसे तीन, पांच और सात दिनके बाद जबतक न मिटे तबतक कुच्छभी क्रिया नहीं करनी । (२)—पवनके जोरसे उडीहुई जंगलकी झीणी झीणी धूल जो थोडीसी लालरंगकी देखनेमें आवे वह सचित्तरज कहातीहै ।

२—औत्पातिक—

१—मांस अथवा रुधिरकी वर्षा होवे तो एक अहोरात्रि (दिनरात) का असज्झाय, २—अचित्तरज (१) केश, पाणीके करे आदि पत्थरकी वर्षा तथा रजोद्घात (२) होवे तो जवतक वंध न होवे तवतक असज्झाय।

३—सादिव्य—

१—गंधर्वनगर (३) दिग्दाह (४) उल्कापात (५) कनकपात (६) यूपक (७) तथा यक्षो—

---

(१)—सपेद धूँएके समान रंगकी रज पडे वह अचित्तरजोवृष्टि कहातीहै। (२)—दिशाओंमें चारों तरफ अंधेरा होजाय अथवा वडीभारी फोजक चलनेसे जैसे रज उडे वैसे आकाशमें चारों तरफसे रजपडे वह रजोद्घात कहाताहै।

(३)—चक्रवर्त्ती आदिके नगरको उत्पात सूचित करनेके लिये उनके नगर उपर सध्या समय आकाशमें देवकृत नगरकी रचना देखनेमें आवे वह 'गधर्वनगर' कहाताहै। (४)—जैसे कोई महानगर जलता हो वैसे किसी एक दिशामें आकाशके अंदर नीचे तो अंधेरा और उपर उजालेवाली अग्निकी ज्वालायें देखनेमें आवें वह 'दिग्दाह' कहाताहै। (५)—तारा टूटनेके समय यदि प्रकाश होवे और पीछे पीछे धोला लीसोटा वंधजाय अथवा केवल प्रकाशही होवे वह 'उल्कापात' कहाताहै। (६)—टूटते समय जिसका प्रकाश न होवे और धोला लीसोटाभी न वधे किन्तु अग्निके अगारेके समान जलता हुआ तारा टूटे वह 'कनकपात' कहाताहै। चौमासेमें सात, सीयालेमें पाच और उन्हालेमें तीन कनकपात होनेके वाद एक पहर असज्झाय। (७) शुक्ल पक्षमें एकम या दूज (जिसदिन चन्द्र उदय होवे उस दिन) से तीन दिनतक सध्याको सूर्य अस्त हुए वाद एक एक पहर तक 'यूपक' कहाताहै, यह असज्झाय केवल कालिक

दिस (१) होवे तो एक पहोर असज्झाय ।

२–चौमासे विना शेषाकालमें यदि विजलि चमके अथवा वर्षा (२) होवे तो एक पहोर और गर्जारव होवे तो दो पहोर असज्झाय ।

३–ग्रहण–चंद्रग्रहण होवे तो जघन्य ८ पहोर और उत्कृष्ट १२ पहोर और सूर्यग्रहण होवे तो जघन्य १२ पहोर तथा उत्कृष्ट १६ पहोर असज्झाय । अब जघन्य तथा उत्कृष्टका विवरण आगे लिख बतातेहैं–

चंद्रग्रहण–उदय होते हुएही चंद्रमाके ग्रहण लगे और कुच्छ देरके बाद छूटजाय अथवा रात्रिके

सूत्रों के लिये है और जगतमें कुच्छभावी उत्पात सूचक किसी दिन उदय अथवा अस्त होनेके समय सूर्य बिंबके नीचे लाल अथवा काले रंगका गाडीकी ऊधीके समान आकारका दंडा देखनेमें आवे तो वहभी 'यूपक' कहाताहै। (१)—किसी एक दिशामें ठहर ठहरके बिजलीके समान प्रकाश होवे. अथवा बिजलीके समान प्रकाश करता हुआ अग्नि सहित पिशाचका रूप देखनेमें आवे वह 'यक्षोदिस' अथवा 'यक्षादित्त' या 'यक्षदित्त' कहाताहै (२)—शेषाकालमें वर्षा होनेपर असज्झाय होनेका संस्कृत या प्राकृत ग्रंथोंमें तो किसीमें नहीं देखाजाता, परन्तु भाषाके असज्झाय विचारोंमें प्रायः सर्वत्र लिखाहै. अतः यहांभी लिखदियाहै। इसमें उत्तराध्ययन आदि कालिक सूत्रोंका असज्झाय होताहै, परन्तु दशवैकालिक आदि उत्कालिक सूत्र पढनेमें कोइ हर्ज नहीं, इसीतरह पक्खी पडिक्कमणा करे बादभी रातमें प्रथम पहर तक कालिक सूत्रोंका असज्झाय होताहै।

अंतमें यानि सवेर होनेके समयमें ग्रहण लगके ग्रहण सहितही चंद्रमा अस्त होवे तो जघन्य आठ पहोर असज्झाय ।

भावी उत्पात सूचक ग्रहण युक्त चन्द्रमा उदय होकर सारी रात ग्रहण सहित रहे और सवेरे ग्रहण सहित ही अस्त होजाय, अथवा ' आज पूनमको चन्द्रग्रहण होनेवालाहै ' ऐसी तो खबर होवे परंतु किस समय होवेगा ? इसकी खबर नहीं होवे और वादलोंके कारण चन्द्रमा भी देखनेमे न आवे इससे उस रातको सज्झाय नहीं करे, अस्तके समय वादले दूर हटनेसे अस्त होता हुआ चन्द्रमा ग्रहण सहित देखनेमें आवे तो उस रातको शामिल गिनने पर ४ पहोर तो ग्रहणवाली रातके और दूसरे दिन तथा रातके ८ पहोर ये दोनों मिलाकर १२ पहोरका उत्कृष्ट असज्झाय चन्द्र ग्रहणका है । आठ तथा १२ पहोर के वीचका मध्यम असज्झाय, अर्थात् – ग्रहण रहित उदय हुआ चद्रमा यदि ग्रहण सहित अस्त होवे तो जिस समय ग्रहण शुरु होवे उस समय से लगाके दूसरे दिन तथा रातकी समाप्ति तक असज्झाय, यदि कुच्छ रात्रि जानेके वाद ग्रहण शुरु होवे और घडी दो घडी रहकर रातमें ही छूट जाय तो उस

रात्रि तक ही असज्झाय होवे, सूर्य उदयके बाद नहीं।

सूर्य ग्रहण—सूर्य अस्त होनेके समय ग्रहण लगे और ग्रहण सहित सूर्य अस्त होजाय तो उस रातके ४ पहोर तथा दूसरे दिन और रातके ८ पहोर ये दोनों मिलकर १२ पहोरका जघन्य असज्झाय।

ग्रहण युक्त सूर्य उदय होकर किसी भावी उत्पातके कारण आखा दिन ग्रहण सहित रहे और संध्याको ग्रहण सहित ही अस्त होजाय, अथवा 'आज अमावसको सूर्य ग्रहण होनेवाला है' इतना तो मालूम हो परन्तु 'अमुक टाइममें होवेगा' यह मालूम न होवे और आकाशमें बादलोंके कारण सूर्यभी देखनेमें न आवे जिससे यह मालूम पड सके कि ग्रहण है या नहीं, इससे दिन भर सज्झाय न करे, संध्या समय बादले दूर होजानेसे अस्त होता हुआ सूर्य ग्रहण सहित देखनेमें आवे तो अमावसके दिन तथा रातके ८ पहोर और दूसरे दिन तथा रातके ८ पहोर ये दोनों मिलकर १६ पहोरका उत्कृष्ट असज्झाय। कदाचित् कभी दुपहरको या तीसरे पहोरको ग्रहणकी शुरुआत होकर ग्रहण सहित ही यदि सूर्य अस्त होजाय तो जिस समय ग्रहण शुरु होवे वहांसे लगाकर दूसरे दिन तथा रातकी समाप्ति तक

मध्यम असज्झाय। यदि सूर्य उदयके बाद (१) ग्रहण लगकर उसी दिन में छूटजाय तो उस दिन रातका ही असज्झाय होताहै, दूसरे दिनका सूर्य उदय हुए बाद नहीं।

४—निर्घात (विजली का पडना) (२) तथा गुजित (३) होवे तो १ अहोरात्रि असज्झाय।

५—सूर्यके उदय तथा अस्त होनेके पहले १-१ घडी और पीछे भी १-१ घडी मिलकर २-२ घडीकी और मध्याह्न (मध्यदिन-दुपहर) तथा आधी रातको २-२ घडीकी ये चार सध्या (कालवेला) कहातीहैं, इनमें भी अस०।

६—आसोज तथा चैत्र सुदि पांचमके दुपहर बाद कार्तिक तथा वैशाख वदी एकम तक अस०।

७—आषाढ तथा कार्तिक चौमासी पडिक्कमणा किये बाद श्रावण तथा मगसिर वदी एकम तक अस०। पिछली दोनों असज्झायोंमें कार्तिक, मगसिर, वैशाख तथा श्रावण वदी एकम ये चारों महापडवा कहातीहैं।

८—फागण चौमासीमे होलि मगलाने (सलगाने) वहासे लगाके जबतक धूलेटी (धूलसे रमना)

(१)—ग्रहण सहित उदय होकर कुच्छ देरके बाद यदि छूटजाय तो उसदिन तथा रातका ही असज्झाय समझना चाहिये। (२)—बादले होवें चाहे न होवें व्यतर देवताने किये हुए गर्जारवकोभी 'निर्घात' कहतेहैं। (३)—गर्जारव होनेके पीछेही जो गुजता हुआ खूब जोरसे गुजारव होवे वह 'गुजित' कहाताहै।

बंध न होवे तबतक असज्झाय (१)।

४—व्युद्ग्रह—

१—राजाओंकी–दंडाधिकारी (कोटवाल आदि) ओं की–सेनापतिओंकी लडाई होती हो । अथवा उपासरेके आसपास सो सो हाथमें स्त्री–पुरुष या मल्ल लोक लडते हों, पर चक्रका भय हो यानि अन्य राजाने अपनी फोजसे गाम या शहरको घेर लिया हो, चोर धाडेती आदिका अत्यन्त भय हो, म्लेच्छ लोकोंका उपद्रव (दंगा–फिसाद) हो तो ये सब जबतक बंध न होवें तबतक असज्झाय । बंध होनेके बाद भी एक अहोरात्रि (२) असज्झाय ।

---

(१)—इसीतरह किसी देश–गाम–नगर आदिमें अन्य भी किसी देवी देवताओं के पूजा निमित्त जो महोत्सव होते हों जिसमें जीव हिंसा अधिक होती हों तो उस देश-गाम आदिमें जितने दिन तक वह महोत्सव रहे उतने दिन तक असज्झाय मानना चाहिये ।

(२) जहां जहां अहोरात्रि लिखा है वहां वहां सर्वत्र यह समझना कि–जिस टाइम में असज्झाय हुआ हो दूसरे दिन उस टाइम तक सज्झाय छोडने की जरूरत नहीं, किंतु घडी रात रहते भी यदि असज्झाय हुआ हो तो भी सवेरे सूर्यउदय हुए बाद सज्झाय करना कल्पताहै । जहां जहां पहोरों की गिणती लिखी है वहां वहां उतने पूरे होने चाहिये ।

२—राजा कालकर जाय तो जब तक दूसरे राजाका अभिषेक न होवे तब तक तथा दूसरें राजाका अभिषेक होजाने परभी जब तक लोकोंमे शोक रहे तब तक असज्झाय ।

३— ' यहांका राजा अन्य देशमे काल करगया' ऐसे समाचार जिस दिन सुननेमें आवे उस दिन से १ अहोरात्रिका असज्झाय ।

४— जो गाम या शहरमें मुखिया हो अथवा जो राजका मुख्य अधिकारी हो । इनमें से किसी का मृत्यु होवे तो ८ पहोर असज्झाय ।

५— जो बहुत कुटुम्बवाला हो जो सिज्जातर (जिसमें साधु उतरे उस मकान) का स्वामी हो, इनमें से किसीकी मृत्यु होवे तथा उपासरेके आस पास सात (७) घर तकमें किसी प्रसिद्ध स्त्री या पुरुषका मृत्यु होवे तो १ अहोरात्रिका असज्झाय ।

६— उपासरेके आस पास सो सो हाथमें अनाथ (लावारिश मनुष्यका मृतक मुरदा जब तक पडा रहे तब तक असज्झाय, उठाये बाद नहीं ।

७—कोई रोता हो तो उसके रोनेका शब्द रातमें जहां तक सुननेमें आवे वहां तक असज्झाय, परन्तु दिन में नहीं ।

८— जो आचार्य हो अथवा जो विद्या सिद्ध या शिष्य समुदाय आदि महाऋद्धि वाला हो, जो घोर तपस्वी हो, जिसने अणसण किया हो, उसी गाम-नगर आदिमें जिसके गृहस्थपणेके सगे संबंधी अधिक हों, ऐसा कोई साधु यदि काल करजाय तो तीन दिन तक असज्झाय ।

९—शारीरिक—

१— जलमें चलने वाले मच्छ आदि जलचर, जमीन ऊपर फिरने वाले गौ-भैंस आदि थलचर, और आकाशमें उडने वाले कबूतर आदि खेचर, इन तीन प्रकार के तिर्यंचों में से किसीभी पंचेंद्रीय चिर्तयके मांस-चमडा-रुधिर (लोही) और हड्डी, इनमें से कोई थोडासाभी उपासरेके आसपास साठ (६०) हाथ तककी भूमिमें यदि पडे तो तीन पहोरका असज्झाय ।

२—उपासरेके आसपास साठ (६०) हाथ तकमें यदि गौ-भैंस आदि कोई तिर्यंच व्यावे तो

मैली पडनेके वाद ३ पहोर असज्झाय।

३—ब्यावे तो दूसरी जगह पर, लेकिन मैली उपासरेके नजीक ६० हाथ तकमें यदि पडे तथा इंडा फूटे तो ३ पहोर असज्झाय। उपासरे में अथवा उपासरेके वाहर भी किसी कपडे आदिके ऊपर इंडा फूटे तो ६० हाथसे दूर जाकर कपडा धो डाले तो असज्झाय नहीं होता, परन्तु भूमि ऊपर यदि फूटे और उसका रस जमीन में उतर जाय तब तो चाहे जमीन ऊपरसे निकाल देवे तो भी तीन पहोरका असज्झाय अवश्य होता है, क्योंकि जमीन खोद कर कुच्छ निकाली नहीं जाती। जिसमें मक्खीका पग डूब सके उतना भी इडेके रसका अथवा रुधिरका विंदु यदि जमीन ऊपर पडे तो असज्झाय होता है।

४—उपासरेके आसपास सो सो हाथ तकमें मनुष्यका मांस-चमडा (चामडी) और रुधिर पडे तो मनुष्यके शरीरसे जुदे हुए बाद १ अहोरात्रि असज्झाय। मांस और चमडी तो तीन पहोरके पहले भी यदि उठा देवे तो असज्झाय मिट जाताहै, परतु पडे हुए रुधिरको उठा देवे तो भी १ अहोरात्रि असज्झाय होता है, घडि आधी घडी रात रहते भी जो रुधिर पडा हो उस को उसी वख्त उठवा देवे तो सवेरे सूर्य

उदयके बाद असज्झाय मिट जाता है ।

५— उपासरेके आसपास सो सो हाथ तकमें किसी स्त्री के यदि लडका जन्मे तो ७ दिन और लडकी जन्मे तो ८ दिन असज्झाय ।

६— उपासरेके नजीक सो सो हाथ तकमें किसी स्त्रीके ' ऋतु धर्म (अटकाव) आया है ' ऐसा मालूम होवे तो ३ दिन असज्झाय, ३ दिनके बाद भी रोगादिकके कारण किसीके रुधिर बहता रहे तो ' असज्झाय ओहडावणऽत्थं ' काउसग्ग करने पर सज्झाय करना कल्पताहै ।

७— उपासरेके नजीक सो सो हाथ तकमें किसीके दांत या दाढ यदि पडजाय तो तलाश करके दूर हटवा देना, यदि न मिले तो ' दंत ओहडावणऽत्थं ' काउसग्ग करने पर सज्झाय करना कल्पताहै ।

८—मनुष्यकी हड्डी शरीरसे जुदी हुए बाद १२ वर्ष तक जहां पडी रहे वहां सो सो हाथ तक में असज्झाय होता है, वास्ते उपासरेके आसपास सो सो हाथ तकमें मनुष्यकी हड्डी यदि पडी हो तो उसको उठवाये विना सज्झाय करना नहीं कल्पताहै ।

९—मनुष्य या तिर्यंच, चाहे जिसकी हो, जो हड्डी श्मशानमें जलगई हो, अथवा किसी जगहसे पाणीमें वहकर आई हो उसका असज्झाय नहीं होता ।

१०—मनुष्यके शरीर सवधी अवयव अथवा रुधिर सौ हाथके अन्दर और तिर्यंचके शरीर संबंधी अवयव अथवा रुधिर ६० हाथके अन्दरभी जिस जगह पडे हों उसके और उपासरेके बीचमें आमेसामे दोनों गाडिया एक साथ निकल सकें वैसा मोटा मार्ग पडता हो तो असज्झाय नहीं होता, किसीके पुत्र या पुत्रिका जन्म होवे अथवा तिर्यंच व्यावे तो उसमेभी इसी तरह समझना ।

११—मनुष्यके चाहे तिर्यंचके शरीरका अवयव अथवा रुधिर जिस जगह पडे वह जगह यदि वर्षादके पानीसे धोवा जाय अथवा अग्निसे जल जाय तो असज्झाय नहीं होता ।

१२—कोई मासाहारी जानवर खायेहुये मासादिको वमन करके पीछा निकाल देवे तो उसका तथा रंधाये हुए मांसादिका असज्झाय नही होता ।

१३—मासादिक खाया हुआ कोई जानवर उपासरेके पासमें यदि खडा रहे तो उसके मुखपर या अन्य

किसी अवयव ऊपर यदि रुधिरादिक न लगा हो तब तो असज्झाय नहीं होता, परन्तु रुधिरादिक लगा हो तो जबतक खडा रहे तबतक असज्झाय ।

प्रकीर्णक-विचार—

१—एक पहोर रातवीते वहां तक देवसी पडिक्कमणा करना कल्पता है, और आवश्यक चूर्णिके अभिप्रायसे उग्घाडा पोरिसीका वखत होवे वहांतक तथा व्यवहार सूत्रके अभिप्रायसे दो पहोर दिन चढे वहांतक राइ पडिक्कमणा करना कल्पता है ।

२—'सिद्धाणं बुद्धाणं' मेंकी "चत्तारि अट्ठ दस दोय वंदिया" यह गाथा वोलते हुए शरीरको इधर उधर घुमाना नहीं ।

३—पडिक्कमणा आदि हरएक क्रियामें जो कोईभी सूत्र वोलना वह इधर उधर चित्त रखके अस्त व्यस्त पणेसे नहीं वोलना, किंतु संपदा आदिका उपयोग रखकर शुद्ध उच्चारण पूर्वक वोलना ।

४—सवेरे राइ पडिक्कमणेकी शुरुआतमें "जयउसामि"का १, राइ पडिक्कमणेके अंतमें "परसमय

तिमिरतरणिं" का २, मंदिरमें ३, पच्चक्खाण पारनेका ४, सवेरको आहार करे बाद ५, देवसी पडिक्कमणेकी शुरुआतका ६, सथारा पोरिसी भणाते समय ७, ये सात चैत्यवंदन साधु साध्विओंको हमेशां करने चाहिए।

५—सवेरे पडिलेहण करे बाद १, संध्या की पडिलेहणके बीचमें २, देवसी पडिक्कमणेके अंतमें अथवा पच्चक्खाण पारती वखत ३, राइ पडिक्कमणेकी शुरुआतमें ४, इस तरह दिनमे चारवार सज्झाय करने की हैं।

६—जिन जिन क्रियाओंमें पालखी लगाके बैठनेका न होवे किंतु उभे पगोंसे बैठनेका होवे अथवा खडे रहनेका होवे उन क्रियाओंमें आसनको ओघेसे एक तरफ हटा देना, परतु उसके उपरही न रहना।

७—लौकिक टीपणेके अनुसार श्रावण महीना बढजाय तो आषाढ चौमासीसे पचासमे दिन दूसरे श्रावण सुदी चौथको सवच्छरी पडिक्कमणा करना, भादवेमें शास्त्र विरुद्ध अस्सी (८०) में दिन नहीं करना।

८—यदि भादवे दो होवे तो आषाढ चौमासीसे पचासमे दिन पहले भादवे सुदी चौथको संवच्छरी पडिक्कमणा करना परन्तु दूसरे भादवेमें अस्सी (८०) दिने नहीं करना।

९—लौकिक टीपणेमें संवच्छरीकी चौथका यदि क्षय होवे तो आगम सम्मत पंचमीके दिन और

यदि पंचमीका क्षय होवे तो आचरणा सम्मत चौथके दिन संवच्छरी पडिक्कमणा करना, परंतु आगम और आचरणा दोनोंसे विरुद्ध होके तीजको कभी नहीं करना ।

१०—लौकिक टीपणेमें यदि संवच्छरीकी चौथ दो होवे तो संपूर्ण ६० घडीकी पहली चौथके दिन संवच्छरी पाडिक्कमणा करना, परंतु १–२ अथवा १०–२० पलकी अथवा घडी दो घडीकी अधूरी दूसरी चौथके दिन नहीं करना, यदि पंचमी दो होवे तो आचरणा सम्मत चौथके दिन संवच्छरी पडिक्कमणा करना, परंतु आचरणा विरुद्ध होके झूंटी कल्पनासे चौथ मानकर पहली पंचमीको संवच्छरी पडिक्कमणा नहीं करना ।

११—लौकिक टीपणेमें किसीभी महिनेकी पूनम या अमावस यदि दो होवे तो पक्खी तथा चौमासी पडिक्कमणा चउदसके दिन करना, पहली पूनम या अमावसके दिन नहीं करना ।

१२—लौकिक टीपणेमें किसीभी महिनेकी पूनम या अमावसका क्षय होवे तो पक्खी और चौमासी पडिक्कमणा तथा पक्खी संबंधी अथवा चउदस संबंधी उपवास चउदसके दिनही करना, परंतु अपनी मनः कल्पनासे, तेरसको चउदस और चउदसको पूनम या अमावस मानके तेरसके दिन नहीं करना, जो कोई

चउदस–पूनम या चउदस–अमावसका छठ (वेला) करता होवे वह तेरस और चउदसका वेला कर लेवे लेकिन पक्खी तथा चौमासी पडिक्कमणा तो चउदसकाही करे ।

१३—लौकिक टीपणेमे किसीभी महिनेकी चउदस यदि दो होवे तो चउदस या पक्खीका उपवास तथा पक्खी और चौमासी पडिक्कमणा सूर्य उदय युक्त संपूर्ण साठ (६०) घडीकी पहली चउदसके दिन करना, घडी आधी घडीकी दूसरी अधूरी चउदसके दिन नहीं करना, अलबत्ता लीलोतरीका त्याग, शीलव्रत का पालना आदि अगता तो पहली और दूसरी दोनों चउदसोके दिन गृहस्थोको पालना चाहिए, ज्यादा पालने मे कोइ नुक्सान नहींहै, लाभहीहै, कमती पालनेमे एक पर्वतिथिकी विराधनाके कारण जरूर अलाभ (नुक्सान) है।

१४—लौकिक टीपणेमें किसीभी महिनेकी चउदसका क्षय होवे तो वधी (१४ वर्ष १४ महिने आदिके प्रमाणसे उचरी हुइ) चउदसके व्रतका उपवास तो तेरस को कर लेना परतु पक्खीका उपवास तथा पक्खी और चौमासी पडिक्कमणा आगमसम्मत पूनम या अमावसके दिन करना, तेरसके दिन नहीं ।

१५—लौकिक टीपणेमे किसीभी महिनेकी दूज (बीज), पचमी तथा इग्यारस इनमेसे कोईभी

पर्वतिथि यदि दो होवे तो उस पर्वतिथिका उपवास आदि व्रत–नियम पहली पर्व तिथिमें करना, अर्थात् उदय तथा अस्त दोनों सहित संपूर्ण साठ (६०) घडीकी पहली दूज, पहली पंचमी और पहली इग्यारस के दिन उपवास आदि व्रत–नियम करना, लीलोतरीका त्याग तथा शीलव्रतका पालना आदि अगता पहली और दूसरी दोनों पर्वतिथिओंमें गृहस्थोंको पालना चाहिए ।

१६––लौकिक टीपणेमें किसीभी महिनेकी दूज, पंचमी तथा इग्यारस इनमेंसे चाहे जिस पर्वतिथि का क्षय होवे तो उस पर्वतिथिके उपवास आदि कृत्य पहली तिथिमें करना, अर्थात् दूजका क्षय होवे तो दूजके व्रत नियम एकमके दिन, पंचमीका क्षय होवे तो पंचमीके व्रत–नियम चौथके दिन और इग्यारसका क्षय होवे तो इग्यारसके व्रत–नियम दशमके दिन करने ।

१७––लौकिक टीपणेमें चाहे जिस महीनेके कृष्ण (वद–अंधेरिए) पक्षकी इग्यारस यदि दो होवे तो दशमका एकासणा दशमके दिनही करना, परन्तु अपनी मनः कल्पनासे दो दशम मानके दूसरी दशम जो कि ज्योतिषके हिसाबसे उदय तथा अस्त दोनों सहित संपूर्ण साठ (६०) घडीकी पहली इग्यारसहै उस

दिन नहीं करना । इसी तरह यदि इग्यारसका क्षय होवे तोभी दशमका एकासणा तो दशमकेही दिन करना, परतु ज्योतिषके हिसावसे सूर्य उदय युक्त दशम तिथीको अपनी मन. कल्पनासे इग्यारस मानकर उसके पहले नवमी जो कि वास्तवमें ज्योतिषके गणितानुसार सूर्य उदय युक्त नवमीहीहै, उस दिन दशमका एकासणा नहीं करना ।

१८—रातमें जिसके कच्चा पाणी पीना होवे उस श्रावकको देवसिय पडिक्कमणेमें दिवसचरिम दुविहार का पच्चख्खाण करना चाहिए, तिविहारका नहीं करना, क्योंकि तिविहारका पच्चख्खाण करें वाद सचित्त (कच्चा) पाणी पीना नहीं कल्पता ।

अगर कोई ऐसा कहे कि–अशन (अन्नादि), खादिम (मेवा तथा फलादिक) और स्वादिम (पान सोपारी-इलायची आदि) इन तीन प्रकारके आहारकाही तो तिविहारमें त्याग होताहै ? तो फिर कच्चा पाणी पीनेमें क्या हर्जहै ? तो जवावमें मालूम होवे कि–जैसे तिविहार उपवासमें दिनभरके लिए तीन प्रकारके आहारका त्याग होताहै तथा तिविहार एकासणे–वियासणे आदि मे एक वार अथवा दो वार खा लेने

के बाद दिनभरके वास्ते तीन प्रकारके आहारका ही त्याग होताहै परंतु कच्चा पाणी सचित्त होने से नहीं पीया जाता वैसेही दिवसचरिम तिविहारमेंभी तिविहार उपवास आदिके समानही तीन प्रकारके आहार का त्याग होता है वास्ते दिवसचरिम तिविहारका पच्चख्खाण करे बाद रातमें सचित्त (कच्चा) पाणी पीना नहीं कल्पता ।

सूतक–विचार

१––पुत्र जन्म होनेसे दस दिन सूतक, पुत्री दिनमें जन्मे तो ११ दिन ओर रात्रिमें जन्मे तो १२ दिन सूतक

२––प्रसववाली स्त्रीको एक मासका सूतक, वहांतक मंदिरमें न जावे, ४० दिनतक देवपूजा न करे. तथा साधुको वहोरावे नहीं ।

३––परदेशसे मृत्युकी सुणावणी आनेपर एकदिन सूतक । जन्म होतेही मृत्यु होनेपर एकदिन सूतक । यह मृत्यु दिनसे ही एक दिनका सूतकहै ऐसा नहीं मानना किन्तु जन्म सूतकके ११–१२ दिनके

उपर मरण सूतक १ दिन अधिक मानना, यदि ऐसा न माना जाय तो सात या आठ महिनेके गर्भ गिरनेका सूतक तो ७—८ दिन मानना और गर्भस्थिति पूरी होके जन्मे हुए बच्चेके मरणका सूतक एक दिनका ही मानना कैसे समव हो सके ?, कदापि नहीं, इसलिए जन्म सूतकके उपरांत १ दिन मरण सूतकका अधिक मानना ही योग्य मालूम होताहै, इससे पांच छ महीनेका बालक हो या ज्यादा कम चाहे जितनी अवस्थाका हो, अपने घरके मनुष्यका मरण जिस घरमें हुआ हो उस घरमें १२ दिनका सूतक अवश्य मानना चाहिए।

४—अपनी निश्रामें रहे हुए दासी आदिके पुत्रादिका जन्म या मरण तथा परदेशी साधर्मी जाति भाईका मरण अपने घरमें होवे तो तीन दिन सूतक।

५—गाय भैंस आदि पशु घरमें व्यावे तो एक दिन सूतक, बाहर व्यावे तो कुछ नहीं।

६—पशुका मरण होने पर कलेवर घरसे बाहर लेजाय वहां तक सूतक, बाद में नहीं।

७—स्त्रीके गर्भ जितने मासका गिरे उतने दिन सूतक।

८—जन्म सूतक या मरण सूतकके घरवाले मनुष्य जो कि उसी जन्म मरणवाले घरमें रहते हों. वे १२ दिन देव पूजा न करें, लेकिन चाहे एक गोत्रके या सगे भाई वा पिताही होवे परन्तु जुदे रहते हो, सूतकवाले घरमें जाना आना न हो, उनको किसी तरहका सूतक नहीं, वास्ते उनको जिन पूजा आदि करनेमें हरकत नहीं और उनके घरसे साधुओंको आहारादि वहोरनेमें भी हरकत नहीं।

९—जो मृतकके घरका मूल कांधीया हो परन्तु जुदे घरमें रहता हो वह १० दिन देवपूजा न करे।

१०—अन्य घरके जो मृतकको अडे हो? वे तीन दिन (२४ प्रहर) देव पूजा तथा प्रतिक्रमण न करें, यानि स्वयं प्रतिक्रमण भणावे नहीं, जो सदाका अखंड नियम होवे तो समता भाव रखके संवरपणेमें रहे, अथवा अन्य भणाता हो वह सुणे, परन्तु स्वमुखसे नवकारका भी उच्चारण न करे, स्थापना, नवकरवाली पुस्तक आदिके हाथ न लगावे।

११—जो स्वयं (खुद) मृतकको अडा न हो परन्तु मृतकको अडनेवाले अन्य मनुष्योंको स्नान करे पहिले अडा हो वह १६ प्रहर तथा एक स्नान करे बाद जो अडा हो वह ८ प्रहर देवपूजा प्रतिक्रमणादि न करे।

१२—जो किसीको भी न अडा हो वह दो वार स्नानसे शुद्ध होसकताहै।

१३—व्याये पीछे १५ दिन बाद भैंसका दूध, १२ दिन बाद गायका दूध, ८ दिन बाद बकरीका दूध पीना कल्पताहै, पहले नहीं।

१४—जन्म तथा मरणके सूतकवाले घरमें १२ दिनतक साधु आहार पाणी नहीं वहोरे और उस घरका जल तथा अग्नि भी देवपूजा में वापरना नहीं।

१५—नीशीथ सूत्रके सोलमे उद्देशेके भाष्यमें जन्म मरणके सूतकवाला घर दुगंछनीय (चमारादिके घर जैसा घृणाजनक) होनेसे आहार पाणी लेने आदिके लिये निषिद्ध बतायाहै, देखो यह रहा वह पाठ—

"दुविहा दुगंछिया खलु, इत्तरिआ हुंति आवकहिआ य। एएसिं नाणत्तं, वुच्छामि आणुपुव्वीए॥ १॥ सूअगमयगकुलाइ, इत्तरिया जे हवंति निज्जूढा। जे जत्थ जुंगिआ खलु, ते हुंति आवकहिआओ॥ २॥ तेसु अण्णा-बत्थाई, वसही विपरिणामो तहेव कुच्छाय। तेसिंपि होइ कुच्छा, सव्वे एयारिसा मन्ने॥ ३॥ इति भाष्य, अत्रचूर्णि-व्याख्या—सूअग० गाहा, ('इत्तरिआ') कालावहिए जे ठप्पा कया ते निज्जूढा, भक्तपानग्रहणादौ निषिद्धाः १, आवकहिगा—जे कुला जत्थ विसए जात्यादि जुंगिआ—दुगछिआ अभोज्या इत्यर्थः"

जो कितनेक शास्त्रोत्तीर्ण वादी चैत्यवासी यतियोंकी परंपरा वाले सकलागमरहस्यवेदित्वाभिमानीलोग जन्म मरणके सूतकको लौकिक कहके नहीं मानते हैं और ऐसे सूतक वालेको भी जिनपूजा आदि करनेका उपदेश देते हैं यह बिल्कुल शास्त्र विरुद्ध है, यदि लौकिक होने के कारण जन्म मरणके सूतकवालेका घर जिनपूजा आदि के लिए त्याज्य न माना जाय तो डूम चमारादिकके घर भी त्याज्य नहीं मानने पडेंगे, क्योंकि लौकिक-पणा दोनोंमें समान है, फरक इतना ही है कि–जन्मादिकके सूतक वाला घर इत्वरिक (अमुक टाइमतक) त्याज्य है और डूम चमारादिकके घर यावत्कथिक (सर्वदा) त्याज्य हैं, देखो आगे लिखे शास्त्र पाठ—

"लोइओ दुविहो--इत्तरिओ आवकहिओ अ, इत्तरिओ सूअगादिसु दसाइदिवसपरिवज्जणं, आवकहिओ जहा–नट्टवरुडछिंपगचम्मारडुंया य, लोउ(त्तरइ)त्तरिओ सेज्जादाणअभिगमसड्ढादि, आवकहिओ रायपिंडो इति" निशीथचूर्णि "प्रतिक्रुष्टकुलं द्विविधं–इत्वरं १ यावत्कथिकं च २, इत्वरं सूतकयुक्तं, यावत्कथिकमभोज्यं, एतन्न प्रविशेत, शाशनलघुत्वप्रसंगात्" दशवैकालिक टीका हरिभद्रसूरिजी कृत ।

१९——ऋतुवंती स्त्री चार दिनतक भांडादिकको अडे नहीं तथा जिनदर्शन मुनिवंदन प्रतिक्रमणादि करे नहीं, पांच दिन देवपूजा नहीं करे ।

गुरु कहे 'करावेमो' इच्छ खमासमणा देकर 'सम्मत्तसामाइय सुयसामाइय देसविरइसामाइय आरोवणत्थं करेमि काउसग्गं अन्नत्थ०' कहकर "सागरवरगंभीरा" तक एक लोगस्सका काउसग्ग करके प्रगट लोगस्स कहे, बाद खमा० देकर व्रतग्राही कहे 'इच्छाकारेण तुम्हे अम्हं सम्मत्तसामाइय सुयसामाइय (१) देसविरइसामाइय सुत्तं उच्चरावेह' गुरु कहे 'उच्चरावेमो' व्रतग्राही 'इच्छं' कहकर एक एक व्रतके आलावेकी शुरुमें तीन तीन नवकार गिणकर थोडासा नमा हुआ जैसे गुरु पाठ उच्चरावे वैसे गुरुके साथ खुदभी मनमें पाठ कहता हुआ समकितसामायिक देसविरतिसामायिकका दंडक क्रमसे तीन तीन वार उच्चरे गुरुभी समकित आदि एक एक व्रतके आलावा तीन तीन वार उच्चराये, बाद व्रतग्राही के मस्तक पर वासक्षेप डाले। समकित-दंडकपाठ यथा—

अहन्न भंते! तुम्हाण समीवे मिच्छत्ताओ पडिक्कमामि, सम्मत्त उवसपज्जामि, तजहा—दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ, दव्वओण मिच्छत्तकारणाइ पच्चक्खामि, सम्मत्तकारणाइ उवसंपज्जामि, नो मे कप्पइ अज्जप्प-

(१) यद्यपि श्रुतसामायिकका आलावा जुदा नहीं है तो भी पाठ भंग न होनेके लिये श्रुतसामायिकका भी नाम बोलना विधिप्रपामें कहा है।

श्रीमद्विमानमारूढा, यक्ष मातंग संगता । सा मां सिद्धायिका पातु, चक्रचापेषुधारिणी ।१८। बाद प्रगट लोगस्स और तीन नवकार कहकर बैठके नमुथुणं०, जावंति चेइयाइं०, जावंत केवि०, नमोऽर्हत्०, परमेष्ठिनमस्कारं, सारं नवपदात्मकं । आत्मरक्षाकरं वज्र–पंजराभं स्मराम्यहं ॥१॥ ॐनमो अरिहंताणं, शिरस्कं शिरसिस्थितं । ॐनमो सव्वसिद्धाणं, मुखे मुखपटांबरं ॥२॥ ॐनमो आयरियाणं, अंगरक्षाऽतिशायिनी । ॐनमो उवज्झायाणं, आयुधं हस्तयोर्दृढं ॥३॥ ॐनमो सव्वसाहूणं, मोचके पादयोः शुभे । एसो पंचनमुक्कारो, शिलावज्रमयी तले ॥४॥ सव्वपावप्पणासणो, वप्रो वज्रमयो बहिः । मंगलाणं च सव्वेसिं, खादिरांगारखातिका ॥५॥ स्वाहांतं च पदं ज्ञेयं, पढमं हवइ मंगलं । वप्रोपरि वज्रमयं, पिधानं देहरक्षणे ॥६॥ महाप्रभावा रक्षेयं, क्षुद्रोपद्रवनाशिनी, परमेष्ठि पदोद्भूता, कथिता पूर्वसूरिभिः ॥७॥ यश्चैवं कुरुते रक्षां, परमेष्ठिपदैः सदा, तस्य न स्याद्भयं व्याधि–राधिश्चापि कदाचन ॥९॥ पीछे जयवीयराय० सब जणे कहें ॥ इति देववंदन विधिः ॥

उसके बाद व्रतग्राही खमासमणा देकर मुहपत्ति पडिलेहके दो वांदणा देवे और खमासमणा देकर बोले ' इच्छाकारेण तुम्हे अम्हं सम्मत्तसामाइय सुयसमाइय देसविरइसामाइय आरोवणत्थं काउसग्गं करावेह'

हितं ॥१०॥ पद्मावती देवता आराधनार्थं करेमि काउस्सग्ग अन्नत्थ०, थुइ–धराधिपातिपत्नी या, देवी पद्मावती सदा । क्षुद्रोपद्रवतः सा मां, पातु फुल्लत्फणावलि. ॥ ११ ॥ चक्रेश्वरी देवी आराधनार्थं करेमि काउस्सग्गं अन्नत्थ०, थुइ–चचच्चक्रकराचारु–प्रवालदलसन्निभा । चिरं चक्रेश्वरी देवी, नदतादवताच्च मां ॥१२॥ अछुप्तादेवी आराधनार्थं करेमि काउस्सग्गं अन्नत्थ०, थुइ–खड्गखेटक कोदड, वाणपाणिस्तडिद्द्युति । तुरगगमनाऽच्छुप्ता, कल्याणानि करोतु मे ॥ १३ ॥ कुवेरादेवी आराधनार्थं करेमि काउस्सग्ग अन्नत्थ०, थुइ–मथुरापुरिसुपार्श्वे, श्रीपार्श्वस्तूपरक्षिका । श्रीकुवेरा नरारूढा, सुताकाऽवतु वो भयात् ॥ १४ ॥ ब्रह्मशांति यक्ष आरधनार्थं करेमि काउस्सग्ग अन्नत्थ०, थुइ–ब्रह्मशांति. स मां पाय–दपायाद्वीरसेवक. । श्रीमत्सत्यपुरे सत्या, येन कीर्त्तिः कृता निजा ॥ १५ ॥ गोत्र देवता आराधनार्थं करेमि काउस्सग्ग अन्नत्थ०, थुइ–या गोत्र पालयत्येव, सकलापायत. सदा । श्रीगोत्रदेवता रक्षा, सा करोतु नतांगिना ॥ १६ ॥ शक्रादि समस्त वैयावृत्यकर देवता आराधनार्थं करेमि काउस्सग्ग अन्नत्थ०, थुइ–श्रीशक्रप्रमुखा यक्षा, जिनशासन सश्रिता. । देवदेव्यस्तदन्येऽपि, सघ रक्षत्वपायत. १७ सिद्धायिका शासनदेवता आराधनार्थं करेमि काउस्सग्ग अन्नत्थ०, ४ लोगस्स और १ नवकारका काउस्सग्ग, थुई–

उसके बाद नमुत्थणं० कहकर खडा होके आगे लिखे मुजब आदेश बोलता हुआ एक एक नवकारका काउसग्ग करके नमोऽर्हत्० कथन पूर्वक एक एक थुइ कहे, अंतिम काउस्सग्गमें चार लोगस्स और एक नवकारका चिंतवन करे, आदेश आदि बोलनेका क्रम इस मुजबहै—श्रीशांतिनाथ देवाधिदेव आराधनार्थं करेमि काउस्सग्गं, वंदणवत्तियाए० अन्नत्थ०, थुइ—रोगशोकादिभिर्दोषै—रजिताय जितारये । नमः श्रीशांतये तस्मै, विहितानंतशांतये ॥५॥ श्रीशांतिदेवता आराधनार्थ करेमि काउस्सग्गं अन्नत्थ०, थुइ—श्रीशांतिजिनभक्ताय, भव्याय सुखसंपदं । श्रीशांतिदेवता देया—दशांतिमपनीय मे ॥ ६ ॥ श्रुतदेवता आराधनार्थ—करेमि काउ-स्सग्गं अन्नत्थ०, थुइ—सुवर्णशालिनी देयात्, द्वादशांगी जिनोद्भवा । श्रुतदेवी सदामह्य—मशेषश्रुतसंपदं ॥ ७॥ भवनदेवता आराधनार्थं करेमि काउस्सग्गं अन्नत्थ०, थुइ—चतुर्वर्णाय संघाय, देवी भवनवासिनी । निहत्य दुरितान्येषा, करोतु सुखमक्षतं ॥ ८ ॥ क्षेत्रदेवता आराधनार्थं करेमि काउस्सग्गं अन्नत्थ०, थुइ—यासां क्षेत्रगताः संति, साधवः श्रावकादयः । जिनाज्ञां साधयंतस्ता, रक्षंतु क्षेत्रदेवताः ॥ ९ ॥ अंबिकादेवी आराधनार्थ करेमि काउस्सग्गं अन्नत्थ०, थुइ—अंबा नहतडिंबा मे, शुद्ध बुद्ध सुतान्विता । सिते सिंहे स्थिता गौरी, वितनोतु समी-

दिक्परिमाण व्रतका दंडक—अहन्नं भंते ! तुम्हाण समीवे दिसिपरिमाणं पडिवज्जामि, दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ, दव्वओ ण दिसिपरिमाण, खित्तओ णं धारणापरिमाण, कालओ णं जावज्जीवाए, भावओ णं जाव गहेणं न गहिज्जामि, छलेणं न छलिज्जामि, अन्नेण केणवि रोगातंकेण जाव एसो परिणामो मे न परिवडइ ताव मे एयं अभिग्गहं, अन्नत्थणाभोगेणं सहसागारेण महत्तरागारेण सव्वसमाहिवत्तियागारेण वोसिरामि ॥ ७ ॥

भोगोपभोग व्रतका दंडक—अहन्न भंते ! तुम्हाण समीवे भोगोवभोगवए भोयणाओ अनतकायबहुवीय राइभोयणाइ परिहरामि, कम्मओ ण पन्नरस कम्मादाणाइ इगालकम्माइयाइ बहुसावज्जाइं खरकम्माइं एयाभियोग परिहरामि, दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ, दव्वओ ण भोगोवभोगवय, खित्तओ णं इत्थ वा अन्नत्थ वा, कालओ ण जावज्जीवाए, भावओ ण जाव गहेणं न गहिज्जामि, छलेण न छलिज्जामि, अन्नेण केणवि रोगातकेण जाव एसो परिणामो मे न परिवडइ, ताव मे एय अभिग्गह, अन्नत्थणाभोगेणं सहसागारेण महत्तरागारेण सव्वसमाहिवत्तियागारेण वोसिरामि ॥ ८ ॥

अनर्थदंड विरमण व्रतका दंडक—अहन्न भंते ! तुम्हाणं समीवे अणत्थदंड पच्चक्खामि, अवज्झाण पावो-

मेहुणं पच्चक्खामि अहागहियभंगएणं, तत्थ दुविहं तिविहेणं दिव्वं तिरिच्छं एगविहं तिविहेणं, माणुस्सयं एगविहं एगविहेणं पच्चक्खामि, दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ, दव्वओ णं मेहुणं, खित्तओ णं इत्थ वा अन्नत्थ वा, कालओ णं जावज्जीवाए, भावओ णं जाव गहेणं न गहिज्जामि, छलेणं न छलिज्जामि, अन्नेण केणवि रोगातंकेणं जाव एसो परिणामो मे न परिवडइ ताव मे एयं अभिग्गहं, अन्नत्थणाभोगेणं सहसागारेणं महत्तरागारेणं सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि ॥ ५ ॥

स्थूल परिग्रह विरमण व्रतका दंडक—अहन्नं भंते ! तुम्हाणं समीवे परिग्गहं पडुच्च अपरिमियपरिग्गहं पच्चक्खामि, धणधन्नाइ नवविह वत्थुविसयं इच्छापरिमाणं उवसंपज्जामि, अहागहिय भंगएणंदव्वओ खितओ कालओ भावओ, दव्वओ णं नवविहं परिग्गहं, खित्तओ णं इत्थ वा अन्नत्थ वा, कालओ णं जावज्जीवाए, भावओ णं जाव गहेणं न गहिज्जामि, छलेणं न छलिज्जामि, अन्नेण केणवि रोगातंकेण जाव एसो परिणामो मे न परिवडइ ताव मे एयं अभिग्गहं दुविहं तिविहेणं अन्नत्थणाभोगेणं सहसागारेणं महत्तरागारेणं सव्वसमाहिवत्तिया-गारेणं वोसिरामि ॥ ६ ॥

कन्नालियं गोवालिय भोमालियं थापणमोस कूडसक्खीय पचविह पच्चक्खामि दक्खिन्नाइअविसए अहागहिय-भगएणं, दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ, दव्वओण मुसावायं, खित्तओण इत्थ वा अन्नत्थ वा, कालओण जावज्जीवाए, भावओणं जाव गहेण न गहिज्जामि, छलेण न छलिज्जामि, अन्नेण केणवि रोगातकेण वा जाव एसो परिणामो मे न पडिवडइ, ताव मे एय अभिग्गह, दुविहं तिविहेण अन्नत्थणाभोगेण, सहसागारेण महत्तरागारेणं सव्वसमाहिवत्तियागारेण वोसिरामि ॥ ३ ॥

स्थूल अदत्तादान विरमण व्रतका दडक—अहन्नं भते! तुम्हाण समीवे थूलग अदिन्नादाण खत्तखणणाइय चोरंकारकर रायनिग्गहकारयं सचित्ताचित्तवत्थुविसय पच्चक्खामि, दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ, दव्वओण अदिन्नादाण, खित्तओण इत्थ वा अपणत्थ वा, कालओणं जावज्जीवाए, भावओण जाव गहेण न गाहिज्जामि छलेण न छलिज्जामि अन्नेण केणवि रोगातकेण वा जाव एसो परिणामो मे न परिवडइ, ताव मे एय अभिग्गह, दुविह तिविहेणं, अन्नत्थणाभोगेण सहसागारेणं महत्तरागारेणं सव्वसमाहिवत्तियागारेण वोसिरामि ॥ ४ ॥

स्थूल मैथुन विरमण व्रतका दडक—अहन्नं भते! तुम्हाणं समीवे ओरालिय वेओव्विय भेयभिन्नं थूलग

भिइ अन्नउत्थिए वा अन्नउत्थिय देवयाणि वा अन्नउत्थिय परिग्गहियाणि वा अरिहंतचेइयाणि वा वंदित्तए वा नमंसित्तए वा पुव्विं अणालत्तेणं आलवित्तए वा संलवित्तए वा तेसिं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा दाउं वा अणुप्पदाउं वा, खित्तओणं इहेव वा अन्नत्थ वा, कालओणं जावज्जीवाए, भावओणं जाव गहेणं न गहिज्जामि, जाव छलेणं न छलिज्जामि, जाव सन्निवाएणं नाभिभविज्जामि, जाव अन्नेण वा केणवि परिणामवसेणं एसो परिणामो मे न परिवडइ ताव मे एयं सम्मदंसणं, अन्नत्थ रायाभियोगेणं, बलाभियोगेणं, गणाभियोगेणं, देवाभियोगेणं, गुरुनिग्गहेणं, वित्तिकंतारेणं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि ॥ १ ॥

स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रतका दंडक—अहन्नं भंते! तुम्हाणं समीवे थूलगं पाणाइवायं संकप्पओ निरवराहं पच्चक्खामि, जावज्जीवाए दुविहं, तिविहेणं, मणेणं वायाए काएणं, न करेमि, न कारवेमि, तस्स भंते! पडिक्कमामि, निंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि ॥ २ ॥

स्थूल मृषावाद विरमण व्रतका दंडक—अहन्नं भंते! तुम्हाणं समीवे थूलगं मूसावायं जीहाच्छेयाइहेउयं

वंदन देना, सिर्फ जहां जहां व्रतोंका का नामहै वहां वहां सर्वत्र जो तपस्या उचरी हो उसका नाम लेना इतनी ही विषेशताहै।

पीछे खमासण देके 'इच्छा करेण तुम्हे अम्ह समत्तसामाइय सुयसामाइय देसविरइसामाइय थिरीकरणत्थ काउसग्ग करोमि?, इच्छं सम्मत्तसामाइय सुयसामाइय देसविरइसामाइय थिरीकरणत्थ करोमि काउस्सग्गं, अन्नत्थ०' कहके पहले की तरह एक लोगस्सका काउस्सग्ग करके प्रगट लोगस्स कहे, पीछे शक्ति अनुसार पच्चक्खाण करे, समय होवे तो खमासमण देके 'इच्छा०तुम्हे अम्हं धम्मोवएसं देह' कहके उपदेश सुणे, फिर खमासमण देके कहे 'विधि करतां अविधि आशातना हुइ होय ने सवि हु मन वचन कायाए करी मिच्छामि दुक्कडं' ॥ इति बारहव्रत तथा सर्व तपस्या उच्चारण विधि समाप्त ॥

तपस्या पारण विधिः—तपस्या पूर्ण हुए बाद ज्ञानपूजादि करके इरियावही पडिकमे बाद खमासमण देके मुहपत्ति पडिलेहे, दो वांदणा देकर खमासमण देके कहे 'इच्छाकारेण तुम्हे अम्हं अमुगतवं पारावेह' गुरु कहे ' पारावेमो ' पीछे तप पारनेवाला इच्छ खमासमण देके कहे ' इच्छाकारेण तुम्हे अम्ह अमुग

'वंदित्ता पवेयह' ॥२॥ व्रतग्राही 'इच्छं' खमासमण देकर कहे 'इच्छाकारेण तुब्भेहिं अम्हं सम्मत्तसामाइयं सुयसामाइयं देसविरइसामाइयं आरोवियं ?' गुरु कहे 'आरोवियं आरोवियं आरोवियं खमासमणाणं हत्थेणं सुत्तेणं अत्थेणं तदुभएणं सम्मं धारणीयं चिरं पालणीयं गुरुगुणेहिं वड्ढहि नित्थारपारगो होह' इस प्रकार कहते हुए व्रतग्राहीके शिरपर वासक्षेप डालें, तब व्रतग्राही 'इच्छामो अणुसट्ठिं' ऐसा कहे ॥ ३ ॥ फिर खमासमण देके कहे 'तुम्हाणं पवेइयं संदिसह साहूणं पवेएमि ?' गुरु कहे 'पवेयह' ॥ ४ ॥ पीछे व्रतग्राही इच्छं खमासमण देके नवकार गुणताहुआ नंदी (स्थापनाचार्य) को तीन प्रदक्षिणा देवे, तीनों प्रदक्षिणा में गुरु तथा संघ 'गुरुगुणेहिं वड्ढहि नित्थारगपारगो होह' कहते हुए व्रतग्राहीके शिरपर तीनवार वासक्षेप डालें ॥ ५ ॥ पीछे व्रतग्राही खमासण देके कहे 'तुम्हाणं पवेइयं साहूणं पवेइयं संदिसह काउस्सग्गं करेमि ?, गुरु कहे 'करेह' ॥ ६ ॥ व्रतग्राही इच्छं खमासण देकर 'सम्मत्तसामाइय सुयसामाइय देसविरइसामाइय आरोवणत्थं करेमि काउस्सग्गं अन्नत्थ०' कहके एक लोगस्सका "सागरवरगंभीरा" तक काउस्सग्ग करके प्रगट लोगस्स कहे ॥ ७ ॥ इति सात थोभा वंदना। कोईभी तपस्या उच्चरे तबभी इसी तरह सात थोभा

व्रतों का मैं पालन करूगा ॥ १०।११।१२।१३ ॥

सर्व तपस्याका दंडकपाठ—अहन्न भते ! तुम्हाणं समीवे अमुगतव * उवसंपज्जित्ताणं विहरामि, तंजहा दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ, दव्वओ णं अमुगतव *, खित्तओ ण इत्थ वा अन्नत्थ वा, कालओ ण जाव परिमाण, भावओ ण जाव गहेण न गहिज्जामि, छलेण न छलिज्जामि, सन्निवाएणं नाभिभविज्जामि, अन्नेण केणवि रोगातंकेइ परिणामवसेण जाव एसो मे परिणामो न परिवडइ ताव मे एस तवो, अन्नत्थ रायाभिओगेण गणाभिओगेण बलाभिओगेणं देवाभिओगेणं गुरुनिग्गहेण वित्तिकंतारएणं, अन्नत्थणाभोगेण सहसागारेणं महत्तरागारेणं सव्वसमाहिवत्तियागारेण वोसिरामि ॥ १४ ॥

सात थोभा वंदना—इसतरह व्रतारोपण किये बाद व्रतग्राही खमासमण देकर मुहपत्ति पडिलेहे और दो वांदणा देकर खमासमण देके कहे 'इच्छाकारेण तुम्हे अम्हं सम्मत्तसामाइयं सुयसामाइयं देसविरइसामाइय आरोवेह' तब गुरु कहे 'आरोवेमो' ॥१॥ व्रतग्राही 'इच्छ' खमासमण देकर कहे 'संदिसह किं भणामो?' गुरु कहे

* * यहा पर जो तप ग्रहण करना हो उसका नाम बोलना

वेदसं हिंसोवकरणदाणं पमायाचरियरूवं चउव्विहं अणत्थदंडं जहासत्तिए परिहरामि, दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ, दव्वओ णं अणत्थदंडं, खित्तओ णं इत्थ वा अन्नत्थ वा, कालओ णं जावज्जीवाए, भावओ णं जाव गहेणं न गहिज्जामि, छलेणं न छलिज्जामि, अन्नेण केणवि रोगातंकेण जाव एसो परिणामो मे न परिवडइ ताव मे एयं अभिग्गहं, अन्नत्थणाभोगेणं सहसागारेणं महत्तरागारेणं सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि ॥ ९ ॥

सामायिक देशावकाशिक पौषधोपवास अतिथिसंविभाग व्रतका दंडक—अहन्नं भंते ! तुम्हाणं समीवे सामाइयं देसावगासियं पोसहोववासं अतिहिसंविभागवयं च जहासत्तीए पडिवज्जामि, इच्चेयं सम्मत्तमूलं पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं सावगधम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरामि, दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ दव्वओ णं सम्मत्तमूलं वारसविहं सावगधम्मं, खित्तओ णं इत्थ वा अन्नत्थ वा, कालओ णं जावज्जीवाए भावओ णं जाव गहेणं न गहिज्जामि, छलेणं न छलिज्जामि, अन्नेण केणवि रोगातंकेण जाव एसो परिणामो मे न परिवडइ ताव मे एयं अभिग्गहं, अन्नत्थणाभोगेणं सहसागारेणं महत्तरागारेणं सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि ॥ अरिहंतादि ६ शाख, राजाभियोग आदि ६ आगारवंदी और अनाभोगादि चार आगारसहित इन

देववंदन विधिः—

तीन खमासमण देकर 'इच्छा कारेण संदिसह भगवन्! चैत्यवंदन करूँ' 'इच्छं'—आदिमं पृथवीनाथमादिमं निष्परिग्रहं। आदिमं तीर्थनाथं च, ऋषभ स्वामिनं स्तुमः ॥ १ ॥ सुवर्णवर्णं गजराजगामिन, प्रलबबाहुं सुविशाललोचनं। नरामरेन्द्रैः स्तुतपादपंकजं, नमामि भक्त्या ऋषभ जिनोत्तमं ॥ २ ॥ अर्हंतो भगवतइंद्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धिस्थिता, आचार्या जिनशोसनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः। श्रीसिद्धांतसुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधका., पंचैते परमेष्ठिन. प्रतिदिनं कुर्वंतु वो मगलं ॥ ३ ॥, जं किंचि० नमुत्थुण० इत्यादि बालके आगे लिखी चार थुइसे देववंदन करे, थुइ यथा—यदंघ्रिनमनादेव, देहिनः संति सुस्थिताः। तस्मै नमोस्तु वीराय, सर्वविघ्न विघातिने ॥ १ ॥ सुरपतिनत चरणयुगान्, नाभेय जिनादिजिनपतीन्नौमि। यद्वचनपालनपरा, जलांजलिं ददतु दुखेभ्य. ॥ २ ॥ वदंति वंदारुगणाग्रतो जिना., सदर्थतो यद्रचयति सूत्रतः। गणाधिपास्तीर्थसमर्थनक्षणे, तदंगिनामस्तु मत तु मुक्तये ॥ ३ ॥ शक्र. सुरासुरवरैः सह देवताभिः, सर्वज्ञशासनसुखाय समुद्यताभि·। श्रीवर्द्धमानजिनदत्तमतप्रवृत्तान्, भव्यान् जनानवतु नित्यममगलेभ्य. ॥४॥

नंदीकड्ढावणियं काउसग्ग करूं' गुरु कहे 'करेह' तब व्रतग्राही 'इच्छं सम्मत्तसामाइय सुयसामाइय देसविरइसामाइय आरोवणियं नंदीकड्ढावणियं करेमि काउस्सग्गं अनत्थ०' कह कर "सागरवरगंभीरा" तक एक लोगस्सका काउस्सग्ग करके पारकर प्रगट लोगस्स कहे, पीछे खमा० देकर कहे 'इच्छा करेण तुम्हे अम्हं सम्मत्तसामाइय सुयसामाइय देसविरइसामाइय आरोवणत्थं वासक्खेवं करेह, चेइयाइं वंदावेह' तब गुरु 'वासक्खेवं करेमो, चेइयाइं वंदावेमो' ऐसा कहकर व्रतग्राहीके सिरपर वासक्षेप करे, पीछे व्रतग्राहीको अपनी डावी तरफ रखकर गुरु अठारह थुइसे देव वंदावे, यथा—

लेवे, जिसको केवल चौथा व्रत लेना हो वह 'चउत्थव्वय' ऐसा आदेश लेवे, किसीको पांच अणुव्रत लेना हो तो 'पंचमणुव्वय' ऐसा आदेश लेना, अथवा 'देसविरइसामाइय' कहनेमें भी कुछ दोष नहीं है, क्योंकि देशविरतिमें सब व्रतोंका समावेश होजाताहै, जितने व्रत लेने हो उतने व्रतोंका दंडक पाठ उच्चराना। पंचमी आदि जो तपस्या लेना हो उसी तपस्याका आदेश लेना। यहांपर श्रावकों को श्रुतसामायिक का आरोपण उपधान वहन विधि से और श्रुतारोपण श्रावक संबंधी सूत्रोंके मुखपाठ पढनेसे होता है, इसलिए श्रुतसामायिक उच्चराने का दंडकपाठ नहीं है, केवल आदेश मांगनेका है।

बारहव्रत तथा सर्व तपस्या उच्चारण विधिः—

प्रथम नंदीकी स्थापना करनी, जो विस्तारसे नंदी करनी हो तो मुद्रित लघुदीक्षा विधिमें लिखित नंदी विधिकी तरह दश दिक्पालोका आह्वानादि करना, और सामान्य पणे करना हो तो स्थापनाचार्यके आगे बाजोट ऊपर पांच साथिये करके ऊपर एक अथवा पांच श्रीफल रखे, ज्ञान पूजा करे, पीछे बारह-व्रतग्राही वा तपस्याग्राही अंजलीमें चावल, श्रीफल रोकड नाणु लेकर स्थापनाचार्यके सामने चारों दिशामें एक एक नवकार गिणता हुआ तीन प्रदक्षिणा देकर चांवल श्रीफलादि स्थापनाचार्यके सामने रखे, बाद खमासमण देकर इरियावही पडिक्कमे, पीछे खमा० देकर (१) मुहपत्ति पडिलेहके दो वांदणे देवे और खमा० देकर कहे 'इच्छा कारेण तुम्हे अम्हं (२) सम्मत्तसामाइय सुयसामाइय देसविरइसामाइय आरोवणियं

(१) यहा पर मुहपत्ति पडिलेहण, वांदणे तथा नंदी कड्ढावणी काउस्सग विधिप्रपामें नहीं है।

(२) समकित विना बारह व्रत नहीं उच्चरेजाते वास्ते समकित सहित बारह व्रत उचरने हो तो यह आदेश बोले, केवल समकित लेना हो तो आदेश लेते समय 'सम्मत्तसामाइय सुयसामाइय' कहे, जिसने समकित पहले लिया हो वह केवल देशविरतिका-आदेश

१७—किसीके रोगादि कारणसे तीन दिन बाद भी रक्त (खून) बहता दीखे तो उसका विशेष दोष नहीं, शुद्धविवेकसे पवित्र होके पांच दिन बाद स्थापना व पुस्तकादिको अडे, साधुको वहोरावे, जिन दर्शन तथा अग्र पूजा करे, परन्तु अंग पूजा न करे, जिनके ऋतुधर्मका टाइम नियमित न हो, याने आगे पीछे (मोडा-वेगा) बिना टाइमसे ऋतुधर्म आता हो उनको तो तीर्थादि हर किसी जगह रही हुई चमत्कारी मूलनायक जिनप्रतिमाकी अंगपूजा नहीं करनी, जिससे प्रभु आशातनाको नहीं सहने वाले अधिष्ठायक देवका तथा उस देव संबंधी चमत्कारका लोप न हो और जिन प्रतिमाकी महिमा नष्ट होने के कारण शासनोन्नतिको नाशकरनेके दोषकी भागीदार वह स्त्री न होने पावे ।

१८—ऋतुवंती स्त्रीको ऋतुदिनमें तपस्या करनी कल्पतीहै और उनकी करी तपस्या सफलहै परन्तु ऋतुदिनमें जिनपूजा प्रतिक्रमणादि कोई भी क्रिया करनी नहीं कल्पती ।

२२—मडली रचना विधिः ... ५१

आवश्यकीय विचार सग्रहः

१—काउसग्ग-दोष विचार ५३
२—वादणे देनेका विचार ५५
३—छम्मासी तप चिंतन विचार ५७
४—सिझातर-विचार ५९
५—आहार-दोष विचार ६०
६—मुहपत्ति-पडिलेहण-विचार ७४
७—उपकरण विचार (साधु के १४ उपकरण) ७८
(साध्वी के २५ उपकरण) ८३
८—स्थडिल-पडिलेहण-विचार ८६
९—पचमहाव्रत-भावना-विचार ८७
१०—संडाशक-प्रमार्जन विचार ९१
११—असज्झाय-विचार ९२
१२—प्रकीर्णक-विचार १०६
१३—सूतक विचार ११२
१४—बारह व्रत तथा सर्व तपस्या उच्चारण विधिः ११८
१५—सर्व तपस्या पारण विधिः १३२

सूचनाः—पर्यंत आराधना विधि, महापारिद्वावणिया विधि, अंतिम देव-वंदन विधि और श्रावक-कर्तव्य इन चार विधियों बाबत पृष्ठ ५२ की सूचना देख लेना ।



सूचना—पृष्ट २६ पंक्ति ५ की टिप्पणी जोकि टाइपके अनवकाशसे वहां देनी रह गई थी सो यहां दी जाती है।

" दाऊण वंदणं तो, पणगाइसु जईसु खामए तिन्नि। किइकम्मं करि आयरि—यमाइ गाहातिगं पढइ सड्ढो ॥ १ ॥"

योगशास्त्र टीका चतुर्थ प्रकाश।

अर्थः— वंदित्तु या पगामसिज्जाए कहे बाद बांदणे देके पांच आदि साधुओंमें तीनको अब्भुट्ठिया खमावे, फिर बांदणे देके "सड्ढो" नाम श्रावक "आयरिय" आदि तीन गाथा पढे (बोले)।

योगशास्त्र छपानेवालोंने उपरोक्त गाथामें से "सड्ढो" शब्द निकाल दिया है परन्तु खुद श्री हीरविजयसूरिजी लिखते हैं कि-हमने योगशास्त्र टीका की जूनी छ प्रतियें देखी हैं उनमें सबमें यह गाथा "सड्ढो" शब्द युक्त ही है, देखो वह पाठ यह है-"योगशास्त्रवृत्तिजीर्णपुस्तकषट्कं विलोकितं, तत्र सर्वत्रापि "काऊण वंदणं तो" इति गाथायाः पाठः 'सड्ढो' इति पदेनैव संयुक्तो दृश्यते" हीरप्रश्न तृतीय प्रकाश १४५ मा प्रश्न।

॥ इति संविग्न साधु—साध्वी आवश्यकीय विधि संग्रहः समाप्तः ॥

अनुक्रमणिका—

विधियोंके नाम	पत्रांक	विधियोंके नाम	पत्रांक	विधियोंके नाम	पत्रांक
१—राइय-पडिकमण-विधिः	१	८—स्थडिल जानेकी विधिः	१९	१५—द्वादशावर्त्त वंदना विधि॰	४१
२—प्रातः पडिलेहण विधिः	८	९—संध्या पडिलेहण विधिः	२०	१६—पाक्षिकादि गुरु वदना विधिः	४२
३—अभ्युत्थान गुरु-वदना विधिः	१२	१०—देवसिय-पाडिकमण-विधि॰	२३	१७—सचित्त–अचित्तरज ओहडावण विधि॰	४४
४—चैत्यवंदन विधिः	१३	११—राइयसथारा पोरिसी विधिः	३०	१८—सज्झाय-निक्षेप-विधिः	४४
५—उग्घाडा पोरिसी-विधिः	१३	१२—पाक्षिकादि प्रतिक्रमणविधिः	३१	१९—सज्झाय उत्क्षेप-विधिः	४५
६—गौचरी जानेकी तथा आलोचनेकी विधिः	१४	१३—छींक दोप निवारण विधिः	३९	२०—लोच करने व कराने की विधिः	४७
७—पच्चक्खाण-पारण-विधिः	१६	१४—मार्जारी मडली प्रवेश दोष निवारण विधिः	४०	२१—पंचशक्रस्तव-देववंदन विधिः	५०

२२—मंडली रचना विधिः ... ५१

आवश्यकीय विचार संग्रहः

१—काउसग्ग-दोष विचार ... ५३
२—वांदणे देनेका विचार ... ५५
३—छम्मासी तप चिंतन विचार ... ५७
४—सिज्ञातर-विचार ... ५९
५—आहार-दोष विचार ... ६०
६—मुहपत्ति-पडिलेहण-विचार ... ७४
७—उपकरण विचार (साधु के १४ उपकरण) ... ७८
(साध्वी के २५ उपकरण) ८३
८—स्थंडिल-पडिलेहण-विचार ... ८६
९—पंचमहाव्रत-भावना-विचार ... ८७
१०—संडाशक-प्रमार्जन-विचार ... ९१
११—असज्झाय-विचार ... ९२
१२—प्रकीर्णक-विचार ... १०६
१३—सूतक विचार ... ११२
१४—बारह व्रत तथा सर्व तपस्या उच्चारण विधिः ... ११८
१५—सर्व तपस्या पारण विधिः ... १३२

सूचनाः—पर्यंत आराधना विधि, महापारिष्ठावणिया विधि, अंतिम देव-वंदन विधि और श्रावक कर्त्तव्य इन चार विधियों बाबत पृष्ठ ५२ की सूचना देख लेना ।

